(भगवान् महावीर २५ वां निर्वाण शताब्दि के उपलक्ष में)

पूज्य श्री अमोलक ऋषिजी महाराज स्मारक ग्रन्थमाला पुष्प संख्या ८८

अन्तगड़सूत्र मूलपाठ

(अनुवाद सहित)



संयोजक —

पंडित मुनिश्री कल्याण ऋषिजी महाराज

वीर संवत [illegible]

प्रथमावृत्ति

१०००

मूल्य-चार रुपये मात्र

विक्रम संवत्
२०३२
जुलाई
१९७५ ई

प्रकाशकः—
श्री अमोल जैन ज्ञानालय, धूलिया
(पश्चिम खानदेश)

मुद्रकः—
श्री जैनोदय प्रिंटिंग प्रेस
चौमुखीपुल, रतलाम

प्रस्तावना

परम तारक, देवाधिदेव, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, तीर्थंकर भगवन्तों ने जगज्जीवों के कल्याण के लिए जो उपदेश फरमाया है वह 'निर्ग्रन्थ प्रवचन" कहा जाता है। प्रश्न व्याकरण सूत्र मे कहा गया है कि "सव्वजग जीव रक्खणदयहयाए भगवया पावयण कहियं" अर्थात् संसार के सभी जीवो की रक्षा, दया और कल्याण के लिये भगवान् ने प्रवचन फरमाया है।

तीर्थंकर परमात्मा अर्थरूप से जो फरमाते हैं उसे ही चतुर्दश पूर्वधारी गणधर सूत्ररूप में गूंथते हैं। अत्थं भासइ अरहा सुत्तं गथन्ति गणहरा निउणं।

तीर्थङ्करो की यह वाणी सत्य है, अनुत्तर है, अनुपम है, सशुद्ध है, प्रतिपूर्ण है, नैयायिक है, शल्य को काटने वाली सिद्धि और मुक्ति का मार्ग बतलाने वाली, निर्वाण और निर्याण देने वाली है। यह अवितथ, असंदिग्ध और ध्रुव है।

इस वाणी का आशय लेने वाले सिद्ध होते हैं। बुद्ध होते हैं जन्म मरण से मुक्त होते है, निर्वाण को प्राप्त करते हैं और सभी दुःखों का अन्त करते हैं।

द्वादशांगी रूप जिन वाणी मे आठवां अंग 'अन्तगड़दशांग' है। इस अंग सूत्र में उन विशिष्ट पुरुषों महिलाओं और कुमारों का वर्णन किया गया है जिन्होने अपने समस्त कर्मों के आचरण को प्रबल पुरुषार्थ से छिन्न भिन्न करके जन्म मरण रूप संसार का अंत करके मोक्ष एवं निर्वाण प्राप्त किया है। इन महामंगलमय आत्माओं का पुण्यस्मरण भी मंगलमय का कारण होता है अतएव पर्युषण पर्व के मांगलिक दिवसों मे इस "अंतगड सूत्र" को पढ़ने सुनने की परिपाटी जैन समाज में सदियों से चली आ रही है।

समस्त स्थानकवासी जैन समाज में पर्युषण पर्व के दिनों मे यह सूत्र बहुत ही श्रद्धा एवं आदर के साथ पढा और सुना जाता है। वस्तुत. इस सूत्र में वर्णित महापुरुषों, महासतियों और कुमारों का जोवन मुमुक्षु आत्माओं के लिये भव्य आदर्श रूप है।

जिस प्रकार इन आत्माओं ने ज्ञान-दर्शन और चारित्र की उत्कृष्ट साधना करके निर्वाण प्राप्त किया उसी प्रकार उनके पदचिन्हों पर चल कर प्रत्येक आत्मा निर्वाण प्राप्त कर सकती है।

जैन धर्म अहिंसा, संयम, तप, त्याग और तितिक्षा को महत्व देता है, धन, वैभव, राजपाट ऐश्वर्य को नही। जैन धर्म त्याग प्रधान धर्म है, भोग प्रधान नही। जैन धर्म के तीर्थङ्कर स्वय विशाल साम्राज्य को छोड़ कर जगत् के जीवों के कल्याण के लिये निर्ग्रन्थ बने। हजारों सम्राट् और महारानियाँ संसार के वैभव को ठुकराकर तीर्थङ्कर भगवान् के पवित्र चरणों की शरण में आईं।

कृष्ण वासुदेव और सम्राट् श्रेणिक की महारानियो ने तो तीर्थङ्कर प्ररूपित संयम मार्ग अंगीकार करके जो उत्कृष्ट तप त्याग की साधना की वह बहुत ही अनुपम और प्रेरणास्पद है।

महारानियों का विविध तप, गजसुकुमार की तितिक्षा, सुदर्शन श्रावक की दृढता इत्यादि सभी प्रसग मुमुक्षु आत्माओं को सुन्दर प्रेरणा देने वाले है। जगत् के वैभव, सासारिक सुखोपभोग और स्नेही जनों के मोह ममतामयी संबंधों की अनित्यता, अनावश्यकता और अस्थिरता को समझकर इन महान् आत्माओं ने इनका परित्याग करके आत्म कल्याण किया।

आज के इस युग मे जबकि भौतिक और सासारिक सुखों को लालसा और पिपासा अत्यधिक बढ रही है और जिसके कारण ससार मे सर्वत्र अशान्ति संघर्ष और विद्वेष आदि निरन्तर बढते चले जा रहे हैं, ऐसे वातावरण में यह परम आवश्यक है कि सर्व सामान्य जनता को वास्तविक सत्यमार्ग बताया जाय, जिनेश्वर भगवन्तों का परम पावन उपदेश

सुनाया जाय। इस हितकारी और मंगलमय शास्त्रानुसारी धर्म के अनुसरण से ही जगत् का और मानव मात्र का कल्याण हो सकता है।

इसी शुभ आशय से श्री अमोल जैन ज्ञानालय, धुलिया जैन धर्म के ग्रन्थो का प्रकाशन करके जनता में धार्मिक भावना को प्रसारित और प्रचारित करने का प्रयास कर रहा है। इस अन्तगड़ सूत्र का प्रकाशन भी इसी संदर्भ में किया जा रहा है।

भगवान् महावीर के २५०० वे निर्वाण महोत्सव के उपलक्ष में उनकी ही वाणी का यह प्रकाशन उनके प्रति हमारी यह विनम्र श्रद्धाजली है।

श्री अमोल जैन ज्ञानालय की स्थापना वि सं १९९९ में हुई और तभी से यह संस्था जैन धर्म संबन्धी साहित्य का प्रकाशन करके अल्प मूल्य मे वितरित कर रही है। इसके छोटे आकार किन्तु सर्वांग पूर्ण प्रकाशन का एक मुद्दा यह भी है कि पैदल विहार करने वाले संत-सतियों के लिये जितना भार कम रहे विहार मे उतनी ही सहूलियत रहती है, ऐसे यह प्रकाशन इस संस्था का ८८ वाँ पुष्प है। अगले और पुष्प प्रेस मे मुद्रणाधीन है।

इस संस्था को मुख्य रूप से प. मुनि श्री कल्याण ऋषिजी म. सा. का शुभाशीर्वाद प्राप्त है जिससे संस्था को भव्य स्वरूप प्राप्त हुआ है। हम पं. मुनि श्री के अत्यन्त आभारी है।

अन्त मे, हमे विश्वास है कि यह प्रकाशन सबके लिये उपयोगी होगा। इसमे वर्णित तत्वों को अपना कर मुमुक्षु आत्मायें अपना कल्याण करे यही शुभ कामना।

धुलिया
ता० १-६-१९७५

प्रकाशक—
श्री अमोल जैन ज्ञानालय, धुलिया

—: अमोल प्रकाशन :—

(१) श्री आचाराङ्ग सूत्र ५—००
(२) श्री सूयगडाङ्ग सूत्र ५—००
(३) श्री अन्तगढ सूत्र ४-००
(४) श्री आवश्यकसूत्र (मूल) ०—६०
(५) शास्त्र·स्वाध्याय ०—५०
(६) गोसुधर्मा स्वामीने सुना-देव २-००
(७) गोसुधर्मा स्वामीने सुना-गुरु २—००
(८) जीवन श्रेयस्कर पाठमाला ४—००
(९) चिन्तन के चित्र २—००
(१०) ध्यानकल्पतरु २—००
(११) पच्चीस बोल का थोकडा ०—५०
(१२) लघुदण्डक का थोकड़ा ०—५०
(१३) श्री अमोल सूचि रत्नाकर ४ ००
(१४) आतुर प्रत्याख्यान ०—३०
(१५) जैन तत्व प्रकाश १५—००
(१६) महिला जीवन मणिमाला १२—००
(१६ सती पूरा सेट)
(१७) महासती श्रीमती १—००
(१८) महासती मदन रेखा १—००
(१९) रुक्मिणी १—२५
(२०) मल्लिजिन १—५०
(२१) अभयकुमार ०—७०
(२२) ज्ञाना राधना ०—३०
(२३) अक्षय तृतीया ०—५०
(२४) प्रद्युम्नकुमार चरित्र २ ५०
(२५) धर्मवीर जिनदास २—५०
(२६) धन्ना शालिभद्र २—५०
(२७) पू श्री अमोलक ऋषिजी २—६०
म. सा. जीवन चरित्र
(२८) अमोल जीवन ज्योति पू.श्री २ ००
अमोलक ऋषिजी मराठी चरित्र
(२९) भीमसेन हरिसेन ०—६५
(३०) हरिवश ०—५०
(३१) अमृत चरित्रोद्यान ० ९०
(३२) अमृत सुबोध शतक ०—५०
(३३) महाबल मलिया चरित्र १—५०
(३४) चन्द्रसेन लीलावती २—५०
(३५) जयसेन विजयसेन २—००
(३६) सायर तरङ्गिणी २—००
(३७) नवरत्न राशी—१ १—००
(३८) अमृत भजन मंजरी ०—५०
(३९) अमृत कविता कुंज ०—५०
(४०) जिन गुण गितिका १—००
(४१) आलोयणा ०—४०
(४२) विद्वद विनोदिनी १—५०
(४३) सुगेय गीतिका ०—७५
(४४) भक्तामर-हिन्दी-अंग्रेजी १—००
सहित
(४५) तीर्थङ्कर महावीर १०—००
(४६) ऋषभदेव चरित्र-प्रेस कीप्रतिक्षा में
(४७) सदा स्मरण „
(४८) धर्म तत्व संग्रह „
(४९) दृष्टान्त शतक „
(५०) नवरत्न राशि भाग-२ „

❀ नमः श्री वीतरागाय ❀

श्रीमद् अन्तकृद्दशाङ्गसूत्रम्

प्रथम–वर्ग



मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं णयरी होत्था। पुण्णभद्दे चेइए, वणसंडे। १॥

अर्थ—उस काल और उस समय मे अर्थात् इस अवसर्पिणीकाल के चौथे आरे मे, जिस समय श्रीसुधर्मा स्वामी इस भूतल पर विचरण कर रहे थे, चम्पा नामक नगरी थी। उसके ईशान कोण मे पूर्णभद्र चैत्य था। उसके चारों ओर एक वनखण्ड था ॥१॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्जसुहम्मे थेरे समोसरिए। परिसा णिग्गया, जाव पडिगया ॥२॥

अर्थ—उस काल और उस समय मे आर्य सुधर्मा स्वामी पधारे। परिषद् निकली यावत् धर्मकथा श्रवण करके वापिस चली गई ॥२॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्जसुहम्मस्स अंतेवासी अज्जजंबूणामं अणगारे जाव पज्जुवासइ, एवं वयासी—जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं जाव संपत्तेणं सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं अयमट्ठे पण्णत्ते; अट्ठमस्स णं भंते ! अंगस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठ वग्गा पण्णत्ता ॥३॥

अर्थ—उस काल और उस समय मे आर्य सुधर्मा स्वामी के शिष्य आर्य जम्बू स्वामी नामक अनगार यावत् पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले–'भगवन् ! यदि धर्मतीर्थ की आदि करने वाले यावत् निर्वाणप्राप्त श्रमण भगवान् महावीर ने सातवे अग उपासकदशा का उक्त अर्थ कहा है (जो मैंने आपके मुखारविन्द से श्रवण किया है) तो आठवे अग अतकृद्दशा का श्रमण भगवान् महावीर, धर्मतीर्थ की आदि करने वाले यावत् निर्वाणप्राप्त, ने क्या अर्थ कहा है ?

(आर्य जबू स्वामी का प्रश्न सुन कर श्रीसुधर्मा ने कहा)

हे जम्बू ! यावत् निर्वाण को प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर ने आठवे अग अतगडदसा (अन्तकृद्दशा) के आठ वर्ग कहे है ॥३॥

मूल—जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठ वग्गा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं कति अज्झयणा पण्णत्ता ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्ते णं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता । तंजहा—

गोयम-समुद्द-सागर-गंभीरे चेव होइ थिमिते य ।
अयले कंपिल्ले खलु, अक्खोभ-पसेणई विण्हू ॥४।

अर्थ—(जम्बू स्वामी ने पुनः प्रश्न किया–) भगवन् ! यदि श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने आठवें अंग अंतगडदशा के आठ वर्ग कहे हे, तो भगवन् ! अंतगडदशा के प्रथम वर्ग के श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने कितने अध्ययन कहे हे ?

(श्रीसुधर्मा स्वामी बोले–) निश्चय ही जम्बू ! यावत् निर्वाणप्राप्त श्रमण भगवान् महावीर ने अंतगडदसा के प्रथम वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं । वे इस प्रकार है—

(१) गौतम कुमार (२) समुद्र कुमार (३) सागर कुमार (४) गंभीर कुमार (५) थिमित कुमार (६) अचल कुमार (७) काम्पिल्य कुमार (८) अक्षोभ कुमार (९) प्रसेन कुमार और (१०) विष्णु कुमार ॥४॥

मूल—जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्ते णं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईणामं नयरी होत्था–दुवालस जोयणायामा, नव–

जोयणवित्थिन्ना, धणवइमइनिम्माया, चामीकरपागारा, णाणामणिपंचवण्णकविसीसगपरिमंडिया, सुरम्मा, अलकापुरिसंकासा, पमुइयपक्कीलिया, पच्चक्खं देवलोगभूया, पासादीया, दरिसणिज्जा, अभिरूवा, पडिरूवा ॥५॥

अर्थ—(जम्बू स्वामी ने प्रश्न किया-) भगवन् ! यदि यावत् निर्वाणप्राप्त श्रमण भगवान् महावीर ने आठवें अतगडदसा अग के प्रथम वर्ग के दस अध्ययन कहे है, तो भगवन् ! प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ कहा है ?

(सुधर्मा स्वामी ने उत्तर दिया-) जबू ! उस काल और उस समय मे द्वारवती (द्वारिका) नामक नगरी थी । वह बारह योजन लम्वी और नौ योजन चौडी थी । कुबेर देव ने सोच-विचार कर उसका निर्माण किया था । उसका परकोटा स्वर्ण का था और उस पर पाँच वर्ण की नाना मणियो से जड़े हुए कगूरे सुशोभित थे । वह अलकापुरी (कुबेर की नगरी) के समान अतिशय रमणीय थी । उसके निवासी सदैव प्रमुदित-हर्षित रहते थे । वह क्रीडा करने के स्थान जैसी मनोरम थी । साक्षात् देवलोक के समान जान पडती थी । दर्शको के चित्त को प्रसन्न करने वाली, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप अर्थात् अतीव सुन्दर थी ॥५॥

मूल—तीसे णं वारवईए णयरीए बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ ण रेवयए नामं पव्वए होत्था । वण्णश्रो ।६॥

अर्थ—उस द्वारवती नगरी के वाहर उत्तरपूर्व दिशा अर्थात् ईशान कोण मे रैवतक नामक पर्वत था । उसका वर्णन समझ लेना चाहिए ॥६॥

मूल—तत्थ णं रेवयए पव्वए नंदणवणे नामं उज्जाणे होत्था । वण्णओ ॥७॥

अर्थ—उस रैवतक पर्वत पर नन्दनवन नामक उद्यान था । उसका वर्णन समझ लेना चाहिए ॥७॥

मूल—सुरप्पिए नामं जक्खस्स जक्खाययणे होत्था, पोराणे; से णं एगेणं वणसंडेणं परिक्खित्ते, असोगवरपायवे । पुढविसिलापट्टए ॥८॥

अर्थ—उस उद्यान मे सुरप्रिय नामक यक्ष का यक्षायतन था । वह बहुत पुराना था । वह यक्षायतन एक वनखड से वेष्टित था । उसके मध्य मे अशोक का एक उत्तम वृक्ष था । उसके नीचे एक पृथ्वीशिलापट्ट था ॥८॥

मूल—तत्थ णं बारवईणयरीए कण्हे णामं वासुदेवे राया परिवसइ, महया रायवण्णओ ॥९॥

अर्थ—द्वारवती नगरी मे कृष्ण नामक वासुदेव राजा निवास करते थे । वह हिमवान् पर्वत् के समान थे, इत्यादि राजा का वर्णन यहाँ समझ लेना चाहिए ॥९॥

मूल—से णं तत्थ समुद्दविजयपामोक्खाणं दसण्हं दसाराणं, बलदेवपामोक्खाणं पंचण्हं महावीराणं पज्जुण्णपामोक्खाणं अद्धुट्ठाणं कुमारकोडीणं, संबपामोक्खाणं सट्ठीए दुद्दंतसाहस्सीणं, महासेनपामोक्खाणं छप्पण्णाए बलवग्गसाहस्सीणं, वीरसेणपामोक्खाणं एगवीसाए वीरसाहस्सीणं, उग्गसेणपामोक्खाणं सोलसण्हं रायसाहस्सीणं, रुप्पिणिपामोक्खाणं सोलसण्हं देविसाहस्सीणं, अणंगसेणापामोक्खाणं अणेगाणं गणिया–

साहस्सीणं, अण्णेसिं च बहूणं ईसर जाव सत्थवाहाणं वारवईए नयरीए अद्धभरहस्स य समत्थस्स आहेवच्चं जाव विहरइ ॥१०॥

अर्थ—वहाँ (१) समुद्रविजय (२) अक्षोभ (३) स्तिमित (४) सागर (५) हिमवन्त (६) अचल (७) धरण (८) पूरण (९) अभिचन्द्र और (१०) वासुदेव, यह दस दसार थे। बलदेव वगैरह पाँच महावीर थे। प्रद्युम्न वगैरह साढे तीन करोड़ कुमार थे। शाम्ब वगैरह साठ हजार दुर्दान्त थे। महासेन आदि छप्पन हजार बलवान् पुरुष थे। वीरसेन आदि इक्कीस हजार वीर थे। उग्रसेन आदि सोलह हजार मुकुटबद्ध राजा थे। रुक्मिणी आदि सोलह हजार रानियाँ थी। अनंगसेना आदि कई हजार गणिकाएँ थी। इनके सिवाय और भी बहुत से सामान्य राजा, युवराज, सार्थवाह आदि थे। कृष्ण वासुदेव इन सब का द्वारवती नगरी का तथा सम्पूर्ण आधे भरत क्षेत्र का आधिपत्य कर रहे थे ॥१०॥

मूल—तत्थ णं वारवईए नयरीए अंधगवण्ही णामं राया परिवसइ, महया हिमवंत. वण्णओ ॥११।

अर्थ—उस द्वारिका नगरी मे अन्धकवृष्णि नामक राजा निवास करते थे। वह हिमवान् पर्वत के समान महान् थे, इत्यादि राजा का वर्णन समझ लेना चाहिए ॥११॥

मूल—तस्स णं अंधगवण्हिस्स रण्णो धारिणी णामं देवी होत्था, वण्णओ । १२॥

अर्थ—उन अंधकवृष्णि राजा की धारिणी नामक नामक रानी थी । यहाँ रानी का वर्णन समझ लेना चाहिए ॥१२॥

मूल—तए ण सा धारिणी देवी अण्णया कयाइ तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि एवं जाव महब्बले—

सुमिणइ सणकहणा जम्म, बालत्तणं, कलाओ य । जोव्वण पाणिग्गहणं, कंता पासाय भोगा य ॥१॥ णवरं गोयमकुमारे णामेण, अट्ठण्हं रायवरकन्नाणं एगदिवसेणं पाणि गेण्हावेंति, अट्ठट्ठओ दाओ ॥१३॥

अर्थ—धारिणी देवी ने किसी समय पुण्यवन्त के शयन करने योग्य शय्या पर सोते समय सिंह का स्वप्न देखा। इत्यादि कथन भगवतीसूत्र मे कथित महाबल कुमार के समान समझना चाहिए। यथा–स्वप्न का देखना, स्वप्नपाठकों के समक्ष स्वप्न का कथन, उसका फल, कुमार का जन्म, बाल्यावस्था, कलाओ की शिक्षा, यौवन की प्राप्ति, पाणिग्रहण, पत्नियां, उनके लिए प्रसादो का निर्माण तथा मनुष्य सम्बन्धी भोगो को भोगना। विशेषता केवल यही है कि यहां कुमार का नाम गौतम रक्खा गया। एक ही दिन मे आठ श्रेष्ठ राजकुमारियो के साथ पाणिग्रहण कराया गया। आठ–आठ दात दहेज मे दी ॥१३॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी आइगरे जाव विहरइ ॥१४॥

अर्थ—उस काल और उस समय धर्मतीर्थ की आदि करने वाले यावत् अरिहन्त अरिष्टनेमि, अनुक्रम से विचरण करते हुए यावत् द्वारिका नगरी के बाहर नन्दनवन उद्यान मे तप–संयम से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे ॥१४॥

मूल—चउव्विहा देवा आगया, कण्हे वि णिग्गते। १५।

अर्थ—चारो प्रकार के देवो का आगमन हुआ, कृष्ण वासुदेव भी धर्मदेशना श्रवण करने के लिए नगरी से निकले ॥१५॥

मूल—तए णं तस्स गोतमस्स कुमारस्स जहा मेहे तहा णिग्गए, धम्मं सोच्चा, णवरं देवाणुप्पिया ! अम्मापियरे आपुच्छामि, देवाणुप्पियाणं अंतिए पव्वयामि; एवं जहा मेहे जाव अणगारे जाए इरियासमिए जाव इणमेव निग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ ॥१६॥

अर्थ—तव गौतम कुमार भी, ज्ञाताधर्मकथा सूत्र मे कथित मेघकुमार के समान आये। धर्मकथा सुनी। वैराग्य उत्पन्न हुआ। भगवान् से निवेदन किया—माता-पिता से पूछ कर देवानुप्रिय के निकट प्रव्रज्या अंगीकार करूंगा। यावत् वह मेघकुमार के समान अनगार बन गये और ईर्यासमिति आदि से युक्त हुए यावत् निर्ग्रन्थ प्रवचन को ही समक्ष करके विचरने लगे ॥१६॥

मूल—तए णं से गोयमे अणगारे अन्नया कयाई अरहओ अरिट्ठनेमिस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ। अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थ जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥१७॥

अर्थ—तत्पश्चात् उन गौतम अनगार ने किसी समय भगवान् अरिष्टनेमि के शिष्य तथारूप स्थविरों के पास से सामायिक आदि से लेकर ग्यारह अंगो तक अध्ययन किया। अध्ययन करके बहुत उपवास वेला आदि तपस्या से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे ॥१७॥

मूल—तए णं अरहा अरिट्ठनेमी अन्नया कयाई वारवईनगरीओ नंदणवणाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ ॥१८॥

अर्थ—तदनन्तर अर्हत् अरिष्टनेमि किसी समय द्वारिका नगरी से और नन्दनवन नामक उद्यान से बाहर पधारे और जनपदो मे विचरण करने लगे ॥१८॥

मूल—तते णं से गोयमे अणगारे अन्नया कयाइ जेणेव अरहा अरिट्ठनेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठनेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए। एव जहा खंदओ तहा बारस भिक्खुपडिमाओ फासेइ, फासित्ता गुणरयणं पि तवोकम्मं तहेव फासेति णिरवसेसं, एवं जहा खंदओ तहा चिंतेति, तहा आपुच्छति, तहा थेरेहिं कडाहिएहिं सद्धिं सेत्तुंजं दुरूहइ, मासियाए संलेहणाए बारस वरिसाइं परियाओ जाव सिद्धे ॥१९॥

अर्थ—तब गौतम अनगार अन्यदा किसी समय जहाँ अर्हन्त अरिष्टनेमि थे, वहाँ पहुँचे। पहुँच कर अर्हन्त अरिष्टनेमि को तीन बार हाथ जोड कर, आदक्षिण प्रदक्षिणा करके बोले–भगवन् ! आपकी अनुमति प्राप्त करके मैं एक मास की भिक्षुप्रतिमा अंगीकार करके विचरना चाहता हूं। यो भगवती सूत्र में कथित स्कंधकजी के अनुसार बारह ही भिक्षुप्रतिमाओं की स्पर्शना की। गुणरत्नसंवत्सर नामक तप की भी स्पर्शना की। सर्व कथन स्कंधकजी के अधिकार के अनुसार जानना चाहिए। स्कंधक के अनुसार ही भगवान् की आज्ञा लेकर संथारे में सहायक स्थविरों के साथ शत्रुंजय पर्वत पर आरूढ होकर, एक मास की संलेखना करके, बारह वर्ष तक संयम पालकर यावत् सिद्ध हुए ॥१९॥

मूल—एवं खलु समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्ते णं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥२०॥

अर्थ—(सुधर्मा स्वामी जम्बू स्वामी से कहते हैं–) इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाण

प्राप्त ने आठवें अन्तगडदसा अंग के प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह अर्थ कहा है ॥२०॥

प्रथम अध्याय समाप्त

मूल—एवं जहां गोयमो तहा सेसा वण्ही पिया धारिणी माता, समुद्दे सागरे गंभीरे थिमिए, अयले, कंपिल्ले, अक्खोभे, पसेणइ, विण्हुए, एए एगगमा। पढमो वग्गो, दस अज्झयणा पण्णत्ता।

पढमो वग्गो समत्तो

अर्थ—जिस प्रकार गौतम कुमार का अधिकार कहा, उसी प्रकार शेष नौ कुमारों के नौ अध्याय कहने चाहिए। नौ ही कुमारो के अंधकवृष्णि पिता तथा धारिणी माता कहना। दूसरे अध्याय में समुद्र का, तीसरे में सागर कुमार का, चौथे मे गभीर कुमार का, पाँचवे में स्थिमित कुमार का, छठे में अचल कुमार का, सातवें में काम्पिल्य कुमार का, आठवें मे अक्षोभ कुमार का, नौवें में प्रसेनजित कुमार का और दसवे अध्ययन में विष्णु कुमार का वर्णन किया है। इन सब का एक-सा ही गम-पाठ है। यह सब कुमार बारह-बारह वर्ष तक संयम पाल कर, शत्रुंजय पर्वत पर एक मास की संलेखता करके सिद्ध हुए ॥१॥

प्रथम वर्ग समाप्त

द्वितीय वर्ग



मूल—जइ० दोच्चस्स वग्गस्स उक्खेवश्रो । एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठ अज्झयणा पण्णत्ता, तं जहा—

अक्खोभ सागरे खलु, समुद्द हिमवंत अचल णामे य ।
धरणे य पूरणे वि य, अभिचंदे चेव अट्ठमए ॥ १ ॥

अर्थ—दूसरे वर्ग का उत्क्षेप पूर्ववत् जानना चाहिए। जंबू स्वामी ने प्रश्न किया–भगवन् ! यदि श्रमण भगवान् महावीर ने अंतगडदसा के प्रथम वर्ग का यह अर्थ कहा है तो दूसरे वर्ग का क्या अर्थ कहा है ? श्रीसुधर्मा स्वामी बोले–हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर यावत् मुक्ति प्राप्त ने अन्तगडदसा अंग के द्वितीय वर्ग के आठ अध्ययन कहे हैं। वे इस प्रकार हैं—(१) अक्षोभ (२) सागर (३) समुद्र (४) हिमवन्त (५) अचल (६) धरण (७) पूरण (८) अभिचन्द्र ॥१॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए वण्हो पिया धारिणी माया। जहा पढमो वग्गो

तहा सव्वे अज्झयणा गुणरयणं तवोकम्मं सोलस वासाइं परियाओ, सेत्तुंजे मासियाए संलेहणाए जाव सिद्धा।
एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्ते णं अट्ठमस्स अंगस्स दोच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥२॥

इति बिउवग्गो ।

अर्थ—उस काल और उस समय में द्वारवती नगरी में अन्धकवृष्णि नामक राजा थे। वही इन आठो कुमारो के पिता थे। धारिणी माता थी। जैसे प्रथम वर्ग मे गौतम कुमार का वृत्तान्त कहा वैसा ही इन सब का कहना चाहिए। इन्होने भी गुणरत्न संवत्सर तप किया, सोलह वर्षो तक साधुपर्याय का पालन किया। शत्रुञ्जय पर्वत पर एक महीने की संलेखना करके सिद्धि प्राप्त की।

श्रमण भगवान् महावीर ने आठवे अग के द्वितीय वर्ग का यह अर्थ कहा है।

दूसरा वर्ग समाप्त

तृतीय वर्ग

मूल — जइ० तच्चस्स उक्खेवओ। एवं खलु जंबू ! अट्ठमस्स अंगस्स तच्चस्स वग्गस्स तेरस अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा अणीयसेणे, अणंतसेणे, अजियसेणे, अणिहयरिऊ, देवसेणे, सत्तुसेणे, सारणे, गए, सुमुहे, दुम्मुहे, कूवए, दारुए, अणादिट्ठी ॥१॥

अर्थ—तीसरे वर्ग का उत्क्षेप समझ लेना चाहिए। यदि श्रमण भगवान् महावीर ने दूसरे वर्ग का यह अर्थ कहा है तो तीसरे वर्ग का क्या अर्थ कहा है ? हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने आठवें अंग के तीसरे वर्ग के तेरह अध्ययन कहे हैं। यथा-(१) अणीयसेन कुमार का (२) अनन्तसेन कुमार का (३) अजितसेन कुमार का (४) अनिहतरिपु कुमार का (५) देवसेन कुमार का (६) शत्रुसेन कुमार का (७) सारण कुमार का (८) गजसुकुमाल कुमार का (९) सुमुख का (१०) दुर्मुख का (११) कूपक कुमार का (१२) दारुक कुमार का (१३) अनादृष्टि कुमार का ॥१॥

मूल—जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स तेरस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स अंतगडदसाणं के अट्ठे पण्णत्ते ? ॥२॥

अर्थ—जम्बू स्वामी ने प्रश्न किया-भगवन् ! यदि श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने आठवें अंग अन्तगडदशा के तीसरे वर्ग के तेरह अध्ययन कहे हैं तो भगवन् ! प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ कहा है ? ॥२॥

मूल—एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं भद्दिलपुरे णामं णयरे होत्था, वण्णओ ॥३॥

अर्थ—सुधर्मा स्वामी ने उत्तर दिया–हे जम्बू ! उस काल और उस समय मे भद्दिलपुर नामक नगर था। यहाँ नगर का वर्णन कहना चाहिए ॥३॥

मूल—तस्स णं भद्दिलपुरस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसिभाए सिरिवणे णामं उज्जाणे होत्था। वण्णओ ॥४।

अर्थ—भद्दिलपुर नगर के बाहर उत्तरपूर्व दिग्भाग मे अर्थात् ईशान कोण मे श्रीवन नामक उद्यान था। यहाँ उद्यान का वर्णन कहना चाहिए ॥४॥

मूल—जियसत्तु णामं राया होत्था ॥५॥

अर्थ—उस नगर के राजा का नाम जितशत्रु था ॥५॥

मूल—तत्थ णं भद्दिलपुरे नयरे नागनामं गाहावई परिवसइ, अड्ढे जाव अपरिभूए ॥६॥

अर्थ—भद्दिलपुर नगर मे नाग नामक गाथापति निवास करता था। वह ऋद्धि सम्पन्न यावत् किसी से पराभूत होने वाला नही था ॥६॥

मूल—तस्स णं नागस्स गाहावइस्स सुलसा नामं भारिया होत्था, सुकुमाला जाव सुरूवा ॥७।

अर्थ—उस नाग नामक गाथापति की पत्नी का नाम सुलसा था। वह सुकुमार शरीर वाली यावत् सुरूपवती थी ॥७॥

मूल—तस्स णं नागस्स गाहावइस्स पुत्ते सुलसाए भारियाए अत्तए अणीयससेणणामं कुमारे होत्था, सुकुमाले जाव सुरूवे, पंचधाइपरिक्खित्ते; तंजहा–खीरधाई, जहा दढपइन्ने, जाव गिरिकंदरमल्लीणेव चंपगवर–पायवे सुहं सुहेणं परिवड्ढइ ।८॥

अर्थ—नाग गाथापति का पुत्र और सुलसा का आत्मज अणीयससेन नामक कुमार था। वह सुकुमार यावत् सुरूप था। पांच धायों से घिरा रहता था, यथा-(१) दूध पिलाने वाली धाय (२) स्नान कराने वाली धाय (३) शृंगार करने वाली धाय (४) गोद में लेने वाली धाय और (५) खेल खिलाने वाली धाय। शेष वर्णन औपपातिक सूत्र मे कथित दृढप्रतिज्ञ कुमार के समान जानना चाहिए, यावत् पर्वत की कंदरा मे जैसे चम्पक वृक्ष निर्बाध रूप से बढता है, उसी प्रकार अणीयससेन कुमार सुखपूर्वक वृद्धि को प्राप्त होने लगा ॥८॥

मूल—तए णं तं अणीयससेणकुमारं साइरेगअट्ठवासजायं जाणित्ता अम्मापियरो कलायरियं जाव भोगसमत्थे जाए यावि होत्था ॥९॥

अर्थ—तब अणीयससेन कुमार को आठ वर्ष से कुछ अधिक उम्र का हुआ जान कर माता-पिता ने कलाचार्य को सौंप दिया। यावत् वह भोग भोगने मे समर्थ हो गया ॥९॥

मूल—तए णं तं अणीयससेणकुमारं उम्मुक्कबालभावं जाणित्ता अम्मापियरो सरिसयाणं जाव बत्तीसाए इब्भवरकन्नगाणं एगदिवसेणं पाणिं गेण्हाविंति ॥१०॥

अर्थ—तब अणीयससेन कुमार के माता-पिता कुमार को यौवन वय मे प्राप्त हुआ जान कर समान, समान वय वाली समान रूप और यौवन वाली उच्च सेठों की बत्तीस कन्याओ का एक ही दिन पाणिग्रहण करवाते हैं ॥१०॥

मूल—तए णं से नागे गाहावई अणीयससेणस्स कुमारस्स इमं एयारूवं पीइदाणं दलयइ, तंजहा—बत्तीसं हिरण्ण-कोडीओ जहा महब्बलस्स जाव उप्पिं पासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ ॥११॥

अर्थ—तब नाग गाथापति ने अणीयससेन कुमार को इस प्रकार प्रीतिदान दिया—बत्तीस करोड हिरण्य आदि। जैसे भगवतीसूत्र मे महाबल कुमार के दायजे का वर्णन है, उसी प्रकार यहाँ समझना चाहिए अर्थात् बत्तीस-बत्तीस नग एक सौ अट्ठानवे वस्तुओ के दिये। यावत् अणीयससेन कुमार अटारी पर रह कर बजते हुए मृदग आदि के साथ मनुष्य-सम्बन्धी कामभोम भोगने लगा ॥११॥

मूल—तेणं कालेण तेण समएणं अरहा अरिट्ठणेमी जाव समोसढे, सिरिवणे उज्जाणे अहा जाव विहरइ।१२॥

अर्थ—उस काल और उस समय मे अर्हन्त अरिष्टनेमि यावत् पधारे और श्रीवन नामक उद्यान में उचित स्थान की याचना करके ठहर गये ॥१२॥

मूल—परिसा णिग्गया ॥१३।

अर्थ—भगवान् की धर्मदेशना श्रवण करने और उपासना करने के लिए परिषद् निकली ॥१३॥

मूल—तए णं तस्स अणीयससेणस्स कुमारस्स महया जणसद्दं जहा गोयमे तहा, नवरं सामाइय-माइयाइं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जइ, वीसं वीसाइं परियाओ, सेसं तहेव जाव सेत्तुंज्जे पव्वए मासियाए संलेहणाए जाव सिद्धे।१४।

अर्थ—तब अणीयससेन कुमार भी बहुत लोगों का कोलाहल सुन कर गौतम कुमार की तरह भगवान् अरिष्टनेमि के दर्शनार्थ आया। दीक्षा अंगीकार की। विशेषता यह है कि अणीयससेन मुनि ने सामायिक से लगा कर चौदह पूर्वो का ज्ञान प्राप्त किया। बीस वर्ष तक संयम का पालन किया। शेष वर्णन वैसा ही जानना, यावत् शत्रुञ्जय पर्वत पर एक मास का संथारा करके यावत् सिद्धि प्राप्त की ॥१४॥

मूल—एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥१५॥

अर्थ—श्रीसुधर्मा स्वामी तीसरे वर्ग का उपसंहार करते हैं—हे जम्बू! श्रमण यावत् निर्वाणप्राप्त भगवान् महावीर ने आठवें अंतगडदशा अंग के तीसरे वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह अर्थ कहा है ॥१५॥

मूल—एवं जहा अणीयससेणे एवं सेसा वि, अणंतसेणे, अजियसेणे, अणिहयरिऊ, देवसेणे, सत्तुसेणे छ अज्झयणा एक्कगमा। बत्तीसाओ दाओ, वीसं वासाइं परियाओ, चोद्दस पुव्वाइं अहिज्झंति, सेत्तुंजे जाव सिद्धा ॥१६॥

छट्ठमज्झयणं समत्तं।

अर्थ—जिस प्रकार अणीयससेन का अधिकार कहा, उसी प्रकार शेष अनन्तसेन, अजितसेन, अनिहतरिपु, देवसेन, और शत्रुसेन कुमारों का भी अधिकार कहना चाहिए। सब के पिता नाग गाथापति, माता सुलसा, बत्तीस-बत्तीस स्त्रियाँ, बत्तीस-बत्तीस करोड़ का प्रीतिदान, बीस वर्ष की दीक्षा, चौदह पूर्वों का अध्ययन यावत् शत्रुञ्जय पर्वत पर सिद्धि; यह सब वर्णन इन पाँचों में भी समझना। इस प्रकार छठा अध्ययन समाप्त हुआ ॥१६॥

मूल—जइ णं भंते ! उक्खेवओ सत्तमस्स । तेणं कालेणं तेणं समएणं वारवईए णयरीए जहा पढमे, णवरं वसुदेवे राया, धारिणी देवी, सीहो सुमिणे, सारणे कुमारे, पण्णासओ दाओ, चोद्दस पुव्वा, वीसं वासा परियाओ, सेसं जहा गोयमस्स जाव सेत्तुंजे सिद्धे ॥१॥

सत्तमज्झयणं समत्तं ।

अर्थ—यदि श्रमण भगवान् महावीर ने छठे अध्ययन का यह अर्थ कहा है तो सातवे का क्या अर्थ कहा है ? इस प्रकार सातवे अध्ययन का उत्क्षेप कहना चाहिए ।

सुधर्मा स्वामी ने उत्तर मे कहा–उस काल और उस समय द्वारिका नगरी में इत्यादि पूर्ववत् जानना । विशेषता यह है कि–वसुदेव राजा पिता, धारिणी, देवी माता, सिह स्वप्न देखा । सरण नामक कुमार हुआ । पाँच सौ कन्याओं के साथ एक दिन मे पाणिग्रहण कराया । पाँच–पाँच सौ नगों का दहेज दिया गया । शेष सब अधिकार गौतम कुमार के समान समझना । यावत् शत्रुञ्जय पर्वत पर एक मास की सलेखना करके सिद्धि प्राप्त की ॥१॥

सातवाँ अध्याय समाप्त

मूल —जइ उक्खेवो अट्ठमस्स । एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं वारवईए णयरीए जहा पढमो जाव अरहा अरिट्ठनेमी समोसढे ॥१॥

अर्थ—जम्बू स्वामी ने जब आठवे अध्ययन के अर्थ के विषय मे प्रश्न किया तो श्रीसुधर्मा स्वामी बोले–हे जम्बू ! उस काल और उस समय मे द्वारिका नामक नगरी थी । उसका कथन प्रथम अध्ययन के अनुसार जानना चाहिए; यावत् अरिहन्त अरिष्टनेमि पधारे ॥१॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतेवासी छ अणगारा भायरा सहोदरा होत्था—सरिसया, सरित्तया सरिव्वया, नीलुप्पल-गवल-गुलिय अयसि कुसुमप्पगासा, सिरिवच्छंकियवच्छा, कुसुमकुंडलभद्दलया, नलकुब्बरसमाणा ॥२॥

अर्थ—उन काल और उस समय अरिहन्त अरिष्टनेमि के छह अन्तेवासी (शिष्य) साधु सहोदर भाई थे। छहों एक सरीखे, समान त्वचा वाले, समान उम्र के (दिखाई देने वाले) नील कमल, भैंस के सींग, नील की गुटिका एवं अलसी के फूल जैसे प्रकाशमान शरीर के धारक, श्रीवत्स स्वस्तिक से अंकित वक्ष स्थल वाले, फूलों के समान सुकुमार तथा कुंडल के समान घुंघराले सुन्दर बालों वाले नलकूवर के समान सुन्दर थे ॥२॥

मूल—तए णं ते छ अणगारा जं चेव दिवसं मुंडा भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइया तं चेव दिवसं अरहं अरिट्ठनेमि वंदंति नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—'इच्छामो णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाया समाणा जावज्जीवाए छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरित्तए।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह' ॥३॥

अर्थ—तत्पश्चात् जिस दिन उन छह सहोदर भाइयों ने दीक्षा अंगीकार की और अनगार-अवस्था धारण की उसी दिन उन्होंने अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान् को वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया—'भगवन्! हमारी इच्छा है कि आपकी आज्ञा प्राप्त हो जाय तो जीवन पर्यन्त निरन्तर बेले-बेले की तपस्या करते हुए और संयम एवं तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरें।

भगवान् ने फर्माया–'जिस प्रकार तुम्हे सुख उपजे, वैसा ही करो। उसमें विलम्ब मत करो ॥३॥

मूल – तए णं ते छ अणगारा अरहया अरिट्ठनेमिणा अब्भणुन्नाया समाणा जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं जाव विहरंति ४॥

अर्थ – तत्पश्चात् वह छहों अनगार अर्हत् अरिष्ट नेमि की आज्ञा पाकर जीवन-पर्यन्त के लिए बेले-बेले की तपस्या करने लगे ॥४॥

मूल—तए णं ते छ अणगारा अण्णया कयाइ छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेंति, जहा गोयमसामी जाव इच्छामो णं भंते! छट्ठक्खमणस्स पारणाए तुब्भेहि अब्भणुण्णाया समाणा तिहिं संघाडएहिं वारवईए नगरीए जाव अडित्तए। अहासुहं ॥५॥

अर्थ—तदनन्तर उन छह अन॰ ारों ने बेले का पारणा दिन आने पर प्रथम प्रहर मे स्वाध्याय किया, दूसरे प्रहर मे ध्यान किया, और तीसरे मे मुखवस्त्रिका पात्रादि की प्रतिलेखना करके, जिस प्रकार श्रमण भगवान् महावीर की आज्ञा लेकर गौतम स्वामी के गोचरी के लिए जाने का वर्णन किया गया है, उसी प्रकार अरिहन्त अरिष्ठ नेमि की आज्ञा लेते हुए कहा—भगवन्! दो-दो साधुओ का एक-एक संघाड़ा करके-छह साधुओं के तीन संघाड़े करके, आपकी आज्ञा हो तो द्वारिका नगरी मे भिक्षा के लिए अटन करना चाहते है। तब भगवान् ने फर्माया—जिस प्रकार सुख उपजे ॥५॥

मूल—तए णं छ अणगारा अरहया अरिट्ठनेमिणा अब्भणुण्णाया समाणा अरहं अरिट्ठनेमिं वंदंति, नमंसंति, अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियाओ सहसंबवणाओ पडिणिक्खमंति। पडिणिक्खमित्ता तिहिं संघाडएहिं अतुरियं जाव अडंति ॥६॥

अर्थ – तत्पश्चात् छहों अनगारों ने अर्हत् अरिष्टनेमि की अनुमति पाकर, अर्हत् अरिष्टनेमि को वन्दना की, नमस्कार किया और फिर अर्हत् अरिष्टनेमि के पास से, सहस्राम्रवन उद्यान से बाहर निकले। बाहर निकल कर तीन संघाड़े करके, त्वरारहित एव समाधि के साथ द्वारिका नगरी में भिक्षा के लिए भ्रमण करने लगे ॥६॥

मूल—तत्थ णं एगे संघाडए बारवईए नगरीए उच्चनीचमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडमाणे २ वसुदेवस्स रण्णो देवईए देवीए गिहं अणुपविट्ठे ॥७॥

अर्थ – तदनन्तर उन तीन संघाड़ों मे से एक संघाड़ा द्वारिका नगरी के सधन, निर्धन एवं मध्यम कुलो में क्रमश भिक्षा के लिए भ्रमण करता-करता वसुदेव राजा की देवकी रानी के घर मे प्रविष्ट हुआ ॥७॥

मूल—तए णं सा देवई देवी ते अणगारे एज्जमाणे पासित्ता हट्ठ-तुट्ठहियया आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करेत्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहकेसराण मोयगाणं थाल भरेइ, भरेत्ता ते अणगारे पडिलाभेइ, पडिलाभित्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता पडिविसज्जेइ ॥८॥

अर्थ—देवकी महारानी ने उन साधुओं को आता देखा तो उसके हृदय मे हर्ष और सन्तोष हुआ। वह आसन से उठी और सात-आठ कदम सामने गई। फिर तीन बार प्रदक्षिणा की, वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार करके भोजनगृह मे गई। फिर सिंहकेसर मोदकों का थाल भरा और मुनियों को दान दिया-बहराया। बहराने के बाद फिर वन्दन-नमस्कार करके उन्हें विदा किया ॥८॥

मूल—तयाणंतरं च णं दोच्चे संघाडए बारवईए नगरीए उच्च जाव पडिविसज्जेइ ॥९॥

अर्थ—उन साधुओ के जाने के पश्चात् दूसरा सघाड़ा भी द्वारिका नगरी के उच्च, नीच एवं मध्यम कुलों में भिक्षा के लिए भ्रमण करता हुआ देवकी रानी के घर आ पहुँचा। देवकी को आश्चर्य हुआ कि यह वही साधु है या दूसरे ? उसने उन्हें पूर्वोक्त प्रकार से वन्दना-नमस्कार कर सिंहकेसर मोदक बहराये और विदा किया ॥९॥

मूल—तयाणंतरं च णं तच्चे संघाडे बारवइनगरीए उच्चनीय जाव पडिलाभेइ, पडिलाभेत्ता एवं वयासी-किण्हं देवाणुप्पिया ! कण्हवासुदेवस्स इमीसे बारवईए नयरीए बारसजोयणआयामाए नवजोयण-वित्थिन्नाए पच्चक्खं देवलोगभूयाए समणा निग्गंथा उच्चणीयमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खाय-रियाए अडमाणा भत्तपाणं णो लभंति ? जन्नं ताइं चेव कुलाइं भत्तपाणाए भुज्जो भुज्जो अणुप्पविसंति ? ॥१०॥

अर्थ—तत्पश्चात् तीसरा संघाडा भी द्वारिका नगरी के सधन, निर्धन एवं मध्यम कुलों में भ्रमण करता हुआ देवकी रानी के घर पहुँचा। उसे भी वन्दना-नमस्कार करके पहले की भांति मोदक बहराये। बहराने के बाद देवकी ने कहा—देवानुप्रियो ! कृष्ण वासुदेव की इस द्वारिका नगरी मे, जो बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी और साक्षात् देवलोक के समान है, श्रमण निर्ग्रन्थों को सघन, निर्धन एवं मध्यम घरों में अनुक्रम से भिक्षार्थ भ्रमण करते हुए क्या भोजन-पानी नही मिलता है ? जिससे उन्हें बार-बार एक ही घर में प्रवेश करना पड़ता है ? ॥१०॥

मूल—तए णं ते अणगारा देवइं देविं एवं वयासी-णो खलु देवाणुप्पिए ! कण्हस्स वासुदेवस्स इमीसे बारवईए णयरीए जाव देवलोगभूयाए समणा निग्गंथा उच्चणीय जाव अडमाणा भत्तपाणं नो लभति, नो चेव णं ताइं चेव कुलाइं दोच्चं पि तच्चं पि भत्तपाणाए अणुपविसंति ॥११॥

अर्थ—तब उन अनगारों ने देवकी देवी से कहा-देवानुप्रिये ! कृष्ण वासुदेव की इस द्वारिका नगरी में, जो यावत्

प्रत्यक्ष देवलोक के समान है, निर्ग्रन्थ श्रमणों को सधन, निर्धन एव मध्यम कुलों मे भ्रमण करते भोजन-पानी नही मिलता, ऐसी बात नही है। यह बात भी नही है कि उन्हे दुबारा-तिबारा उन्हीं घरों में प्रवेश करना पडता है ॥११॥

मूल—एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हे भद्दिलपुरे नयरे नागस्स गाहावइस्स पुत्ता सुलसाए भारियाए अत्तया छ भायरो सहोदरा, सरिसया जाव नलकुब्बरसमाणा अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म संसारभउव्विग्गा भीया जम्मणमरणाणं मुंडा जाव पव्वइया ॥१२॥

अर्थ—(मुनियो ने आगे कहा-) हे देवानुप्रिये ! भद्दिलपुर नगर में रहने वाले नाग गाथापति के पुत्र और सुलसा नामक भार्या के आत्मज हम छहों सहोदर भाई हैं। हम एक सरीखे यावत् नलकूबर के समान एक-से दिखाई देते हैं। हम छहों भाइयो ने अर्हत् अरिष्टनेमि से धर्म श्रवण करके और अवधारण करके, संसार के भय से उद्विग्न होकर और जन्म-मरण से भयभीत होकर भगवान् के निकट मुंडित होकर दीक्षा अंगीकार की है ॥१२॥

मूल— तए णं अम्हे जं चेव दिवसं पव्वइया तं चेव दिवसं अरहं अरिट्ठनेमि वंदामो नमंसामो, इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हामो-इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं जाव विहरामो। तं अम्हे अज्ज छट्ठक्खमणपारणयंसि पढमाए पोरिसीए जाव अडमाणा तव गेहं अणुप्पविट्ठा। तं नो खलु देवाणुप्पिए। तं चेव णं अम्हे, अम्हे णं अण्णे ॥१३॥-१४॥

अर्थ—तब हमने जिस दिन दीक्षा धारण की, उसी दिन अर्हत् अरिष्टनेमि को वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार अभिग्रह धारण किया-भगवन् ! आपकी आज्ञा हो तो हम यावज्जीवन निरन्तर बेले-बेले का तप करना चाहते हैं। भगवान् ने कहा-जैसे सुख हो वैसा करो। तभी से हम भगवान् की आज्ञा प्राप्त करके बेले-बेले का पारणा करते

विचरते है। आज वेले के पारणक के दिन प्रथम प्रहर मे स्वाध्याय करके, दूसरे प्रहर में ध्यान करके यावत् भगवान् की आज्ञा लेकर तीन मंघाड़े करके भिक्षा के लिए अटन करते हुए तुम्हारे घर मे आये। अतएव हे देवानुप्रिये ! हम वह नही हैं जो पहले आए थे। हम दूसरे है ॥१३–१४॥

मूल—देवइं देविं एवं वयइ वइत्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया ॥१५।

अर्थ—देवकी देवी को इस प्रकार कहकर मुनि जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा मे लौट गये ॥१५॥

मूल—तए णं तीसे देवईए देवीए अयमेवारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पन्ने–एवं खलु अहं पोलासपुरे णयरे अइमुत्ते णं कुमारसमणेणं बालत्तणे वागरिया–तुमं णं देवाणुप्पिए ! अट्ठ पुत्ते पयाइस्ससि, सरिसए जाव नलकुब्बर समाणे। नो चेव णं भारहे वासे अण्णाओ अम्मयाओ तारिसए पुत्ते पयाइस्संति तं णं मिच्छा ॥१६॥

अर्थ—तब उस देवकी देवी को इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ–निश्चय ही पोलासपुर नगर में अतिमुक्तक कुमार श्रमण ने बचपन में ऐसा कहा था कि हे देवकी ! तू आठ पुत्रों का प्रसव करेगी। वे आठो पुत्र एक सरीखे यावत् नलकूबर के समान सुन्दर होंगे। वैसे पुत्रों को इस भरत क्षेत्र में दूसरी माताएँ जन्म नही देती। उनका यह कथन मिथ्या हुआ ॥१६॥

मूल—इमं पच्चक्खमेव दिस्सइ–भारहे वासे अण्णाओ वि अम्मयाओ खलु एरिसए जाव पुत्ते पयायाओ ॥१७॥

अर्थ—यह तो प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा है कि भरत क्षेत्र मे अन्य माताओं ने भी इस प्रकार के सुन्दर यावत् पुत्रों का प्रसव किया है ॥१७॥

मूल—तं गच्छामि णं अरहं अरिट्ठनेमिं वंदामि नमंसामि, इमं च णं एयारूवं वागरणं पुच्छिस्सामि त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—लहुकरण—जाणप्पवरं जाव उवट्ठवेंति जहा देवाणंदा जाव पज्जुवासइ ॥१८।

अर्थ—देवी देवकी ने आगे विचार किया—सो मैं अर्हत् अरिष्टनेमि के पास जाऊँ, उन्हें वन्दना-नमस्कार करूँ और यह प्रश्न पूछूँ। ऐसा विचार करके उसने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और कहा—शीघ्र गति वाला उत्तम रथ उपस्थित करो। यावत् कौटुम्बिक पुरुषों ने रथ उपस्थित किया। देवकी उस पर आरूढ हुई और जिस प्रकार भगवती सूत्र में कथित देवानन्दा ब्राह्मणी भगवान् के दर्शन करने गई थी, उसी प्रकार देवकी देवी भी भगवान् अरिष्टनेमि के दर्शन करने गई यावत् सेवा-भक्ति करने लगी ॥१८॥

मूल—तए णं अरहा अरिट्ठनेमी देवइं देविं एवं वयासी से णूणं तव देवई ! इमे छ अणगारे पासेत्ता अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जेत्था—एवं खलु पोलासपुरे नयरे अइमुत्तएणं तं चेव जाव णिग्गच्छित्ता जेणेव ममं अंतियं तेणेव हव्वमागया। से णूणं देवई अट्ठे समट्ठे ? हंता अत्थि ॥१९॥

अर्थ—तब अर्हत् अरिष्टनेमि ने देवकी देवी से कहा—देवकी ! इन छह अनगारों को देख कर तुम्हे इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् उत्पन्न हुआ कि—पोलासपुर नगर मे अतिमुक्तक अनगार ने कहा था, इत्यादि पूर्ववत्। इस सशय को दूर करने के लिए तुम यहाँ आई हो। हे देवकी ! यह बात यथार्थ है ?

देवकी बोली—हाँ यथार्थ है ॥१९॥

मूल—एवं खलु देवाणुप्पिए ! तेणं कालेणं तेणं समएणं भद्दिलपुरे णयरे णागे णामं गाहावई परिवसइ, अड्ढे ॥२०॥

अर्थ—हे देवानुप्रिये देवकी ! उस काल और उस समय में भद्दिलपुर नगर में नाग नामक गाथापति निवास करता था । वह ऋद्धिमान् यावत् अपराभूत था ॥२०॥

मूल—तस्स णं नागस्स गाहावइस्स सुलसाणामं भारिया होत्था ॥२१॥

अर्थ—उस नाग गाथापति की पत्नी का नाम सुलसा था ॥२१॥

मूल—सा सुलसा गाहावइणी बालत्तेणं चेव नेमित्तएणं वागरिया—एस णं दारिया णिंदू भविस्सइ ॥२२॥

अर्थ—वह सुलसा गाथापतिनी जब बाल्यावस्था में थी, तब नैमित्तिक ने कहा था—यह बालिका मृतवन्ध्या होगी अर्थात् इसके मरे हुए बच्चे होगे ॥२२॥

मूल—तए णं सा सुलसा बालप्पभिति चेव हरिणगमेसी देवभत्तया यावि होत्था । हरिणगमेसिस्स पडिमं करेइ, करेत्ता कल्लाकल्लिं ण्हाया जाव पायच्छित्ता उल्लपडसाडिया महरिहं पुप्फच्चणं करेइ, करेत्ता जाणुपायपडिया पणामं करेइ, करेत्ता तओ पच्छा आहारेइ वा नीहारेइ वा । २३॥

अर्थ—तब से सुलसा बाल्यावस्था से ही हरिणगमेषी देवता की भक्त बन गई। उसने हरिणगमेसी देवता की प्रतिमा बनवाई । प्रतिमा बनवा कर प्रतिदिन स्नान करके, शुद्ध होकर. मंगल कौसुक एवं प्रायश्चित्त करके, गीली साड़ी पहन कर महान् जन के योग्य पुष्पों से उस प्रतिमा की पूजा करती और जमीन पर घुटने टेक कर प्रणाम करती थी । तत्पश्चात् ही आहार नीहार आदि कार्य करती थी ॥२३॥

मूल—तए णं तीसे सुलसाए गाहावइणीए भत्तिबहुमाणसुस्सूसाए हरिणगमेसी देवे आराहिए यावि होत्था ॥२४॥

अर्थ—तब सुलसा गाथापतिनी की भक्ति, बहुमान और शुश्रूषा से हरिणगमेषी देव आराधित हो गया अर्थात् प्रसन्न हो गया ॥२४॥

मूल—तए णं से हरिणगमेसी देवे सुलसाए गाहावइणीए अणुकंपणट्ठयाए सुलसं गाहावइणिं तुमं च णं दोवि सममेव समउउयाओ करेइ ॥२५॥

अर्थ—तब हरिणगमेषी देव ने सुलसा गाथापतिनी की अनुकम्पा के लिए हे देवकी ! तुझे और सुलसा–दोनों को एक ही साथ ऋतुवती किया ॥२५॥

मूल—तते णं तुब्भे दो वि सममेव गब्भे गिण्हह, सममेव गब्भे परिवहह, सममेव दारए पयायह ॥२६॥

अर्थ—तत्पश्चात् तुम दोनों एक ही साथ गर्भ ग्रहण करने लगी, एक ही साथ गर्भ वहन करने लगी और एक ही साथ बालक प्रसव करने लगी ॥२६॥

मूल—तए णं सा सुलसा गाहावइणी विणिहायमावण्णे दारए पयाइति ॥२७॥

अर्थ—तब वह सुलसा गाथापतिनी मृतक बच्चों को जन्म देने लगी ॥२७॥

मूल—तए णं से हरिणगमेसी देवे सुलसाए गाहावइणीए अणुकंपणट्ठयाए विणिहायमावण्णे दारए करयलसंपुडेणं गेण्हइ, गेण्हित्ता तव अंतियं साहरइ, साहरित्ता तं समयं च णं तुमं पि नवण्हं मासाणं सुकुमालदारए पसवसि, जे वि य णं देवाणुप्पिए ! तव पुत्ता ते वि य तव अंतियाओ करयलसंपुडेणं गेण्हइ, गेण्हित्ता सुलसाए गाहावइणीए अंतिए साहरइ, तं तव चेव णं देवइ ! एए पुत्ता, णो चेव णं सुलसाए गाहावइणीए पुत्ता २८–२९॥

अर्थ—तब हरिणगमेषी देव सुलसा गाथापतिनी की अनुकम्पा के लिए उसके मरे बालको को करतल-संपुट में (मिले हुए दोनो हाथो मे) ग्रहण करके तेरे पास ले आता था। उसी समय नौ मास पूर्ण होने पर तू सुकुमार बालकों को जन्म देती थी। सो तेरे बच्चो का संहरण करके करतल-सपुट में लेकर सुलसा के पास ले जाता था। इस कारण हे देवकी ! वे छह अनगार तेरे पुत्र है, परन्तु सुलसा गाथापतिनी के पुत्र नही है ॥२८-२९॥

मूल—तए णं सा देवई देवी अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया, अरहं अरिट्ठनेमिं वंदइ नमंसइ, वदित्ता नमंसित्ता जेणेव ते छ अणगारा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ते छप्पि य अणगारे वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता आगयपण्हुया पप्फुयलोयणा कंचुयपडिक्खित्तया दरियबलयवाहा धाराहयकलंबपुप्फगं पिव समूससियरोमकूवा ते छप्पि अणगारे अणिमिसाए दिट्ठीए पेहमाणी पेहमाणी सुचिरं णिरिक्खइ, णिरिक्खित्ता वंदइ, वदित्ता नमंसइ, नमंसित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठनेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करेत्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता तमेव धम्मियं जाणप्पवरं दुरुहइ, दुरुहित्ता जेणेव वारवई णयरी तेणेव उवागच्छइ, वारवइं नयरिं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता जेणेव सए गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता जेणेव सए वासघरए जेणेव सए सयणिज्जे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सयंसि सयणिज्जंसि निसीयइ॥ ३०॥

अर्थ—तब देवकी देवी अर्हत् अरिष्टनेमि से यह विषय सुनकर और अवधारण करके हर्षित और सतुष्ट हृदय वाली हुई। उसने अर्हत् अरिष्टनेमि को वन्दना-नमस्कार किया। वंदना-नमस्कार करके जहाँ वे छह अनगार थे, वहाँ

पहुँची। पहुँच कर उन छहों अनगारों को वन्दन–नमस्कार किया। वात्सल्य रस की अधिकता के कारण देवकी के स्तनो से दूध झरने लगा। नेत्र प्रफुल्लित हो गये। उसकी कञ्चुकी (चोली) तंग हो गई। हाथों के वलय (चूड़े) तंग हो गये। जैसे मेघ की धारा से सिंचित कदम्ब का पुष्प विकसित हो जाते है उसी तरह देवकी का रोम रोम विकसित हो उठा। वह उन छहों अनगारों को बहुत देर तक टकटकी लगा कर देखती रही। फिर उनको वन्दना–नमस्कार करके अर्हत् अरिष्टनेमि के पास आई और तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा करके, वन्दना–नमस्कार करके उसी धर्मयात्रा के काम आने वाले श्रेष्ठ रथ पर सवार हुई। सवार होकर द्वारवती नगरी की ओर चली। नगरी मे प्रवेश करके जहाँ अपना घर था और जहाँ बाह्य सभाभवन था, उसी ओर गई। उस धार्मिक रथ से नीचे उतरी। फिर जहाँ उसका अपना वासगृह था और जहा अपनी शय्या थी, वहां पहुच कर शय्या पर बैठ गई ॥३०॥

मूल—तए णं तीसे देवईए देवीए अयं अज्झत्थिए ४ समुप्पण्णे एवं खलु अहं सरिसए जाव नल–कुब्बरसमाणे सत्त पुत्ते पयाया, नो चेव णं मए एगस्स वि बालत्तणए समुब्भूए; एस वि य णं कण्हे वासुदेवे छण्हं २ मासाणं ममं अंतियं पायवंदए हव्वमागच्छइ ॥३१॥

अर्थ—तत्पश्चात् देवकी देवी को इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् सकल्प उत्पन्न हुआ–मैंने एक सरीखे यावत् नलकुबेर के समान सुन्दर सात पुत्रों का प्रसव किया, परन्तु निश्चय ही मैंने एक भी बालक के शैशव से आनन्दानुभव नही किया। यह कृष्ण वासुदेव है सो भी छह–छह महीने मे चरण–वन्दना करने आता है–वह भी प्रतिदिन दिखाई नही देता।३१।

मूल—तं धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ ४ जासिं मण्णे णियगकुच्छिसंभूयाइं थणदुद्धलुद्धाइं महुरसमुल्लावयाइं मम्मणपजंपियाइं थणमूलकक्खदेसभागं अभिसरमाणाइं मुद्धयाइं पुणो य कोमल कमलो–वमेहिं हत्थेहिं गिण्हिऊणं उच्छंगे णिवेसियाइं देंति सम्मुल्लावए सुमहुरे पुणो पुणो मंजुलप्पभणिए ॥३२॥

अर्थ—वास्तव में वे माताएँ धन्य हैं, पुण्यवती है जो अपनी कूख से उत्पन्न हुए, स्तनों के दूध मे लुब्ध बने हुए, मधुर-मधुर वचन बोलने वाले, स्तनमूल एवं कांख के भाग मे अधिसरण करने वाले बच्चों को अपने कमलवत् कोमल हाथों से ग्रहण करती है, गोदी मे बिठलाती है, और मीठी-मीठी तोतली बोली बोलती है ॥३२॥

मूल—अहं णं अधन्ना अपुराणा अकयपुराणा एत्तो एगयरमवि न पत्ता, ओहयमणसंकप्पा जाव झियायइ॥३३॥

अर्थ—देवकी पुनः सोचती है-मैं अधन्य हूं, पुण्यहीना हूं. मैने पुण्योपार्जन नहीं किया है, जिससे सात बालकों मे से एक को भी बचपन मे न प्राप्त कर सकी। इस प्रकार मलिनमन होकर यावत् चिन्ता करने लगी ॥३३॥

मूल—इमं च णं कराहे वासुदेवे रहाए जाव विभूसिए देवईए देवीए पायवंदिए हव्वमागच्छइ ॥३४॥

अर्थ—इधर कृष्ण वासुदेव स्नान करके यावत् विभूषित हुए और देवकी देवी के चरणों मे वन्दना करने के लिए शीघ्र आये ॥३४॥

मूल—तए णं से कराहे वासुदेवे देवइं देविं पासइ, पासित्ता देवईए देवीए पायग्गहण करेइ, करित्ता देवइं देविं एवं वयासी-अराणया णं अम्मो! तुब्भे ममं पासित्ता हट्ठ जाव भवह, किराणं अम्मो! अज्ज तुब्भे! ओहय जाव झियायह ॥३५॥

अर्थ—तब कृष्ण वासुदेव की देवकी देवी पर दृष्टि पड़ी। उन्होंने देवकी देवी के चरण छुए और फिर कहा—माँ! अन्य समय तुम मुझे देख कर हर्षित हृदय होती थी; मगर माता! क्या कारण है कि आज मलिनमन होकर चिन्ता कर रही हो? ॥३५॥

मूल—तए णं से देवई देवी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी-एवं खलु अहं पुत्ता ! सरिसए जाव समाणे सत्त पुत्ते पयाया, नो चेव णं मया एगस्स वि बालत्तणे अनुभूए, तुमं पि य णं पुत्ता ! ममं छण्हं छण्हं मासाणं ममं अंतियं पायवंदए हव्वमागच्छसि । तं धन्नाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव झियामि ॥३६॥

अर्थ—तब देवकी देवी ने कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा-पुत्र ! मैंने एक सरीखे यावत् नलकुबेर समान सुन्दर सात पुत्रों को जन्म दिया, मगर एक के भी शैशव का आनन्द अनुभव नहीं किया। हे पुत्र ! तुम भी छह-छह महीने में चरणवन्दन के लिए मेरे पास आते हो। अतएव धन्य है वे माताएँ जो अपनी कूंख से उत्पन्न बच्चों को दूध पिलाती है और उनकी तोतली बोली का आनन्द अनुभव करती है, ऐसा सोच कर चिन्तित हो रही हूं ॥३६॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे देवइं देविं वयासी मा णं तुब्भे अम्मो ! ओहय जाव झियायह, अहण्णं तहा वत्तिस्सामि जहा णं मम सहोदरए कणीयसे भाउए भविस्सति त्तिकट्टु देवइं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव वग्गूहिं समासासइ, समासासेत्ता तओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जहा अभओ, णवरं हरिणगमेसिस्स अट्ठमभत्तं पगेण्हइ, जाव अंजलिं कट्टु एवं वयासी-इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! सहोदरं कणीयसं भाउयं विदिण्णं ॥३७॥

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने देवकी देवी से इस प्रकार कहा—माता ! मन मलिन मत करो, चिन्ता मत करो, मैं ऐसा प्रयत्न करूंगा कि मेरे छोटे भाई का जन्म हो । इस प्रकार देवकी देवी को इष्ट, कान्त यावत् वचनों से आश्वासन देकर वहां से निकले और जहां पोषधशाला थी, वहाँ पहुँचे और जैसे (ज्ञातासूत्र मे कहे अनुसार) अभयकुमार ने देवता का आराधन किया था, उसी प्रकार कृष्ण वासुदेव ने भी आराधन किया। केवल विशेषता यह है कि कृष्ण

ने हरिणगमेषी देव को लक्ष्य करके तेला किया। जब देवता आया तब कृष्ण ने हाथ जोड़ कर इस प्रकार कहा—देवानुप्रिय ! मै एक सहोदर छोटा भाई आपके द्वारा प्रदत्त चाहता हूं। अर्थात् आप दीजिए ॥३७॥

मूल—तए णं से हरिणगमेसी देवे कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—होहिइ णं देवाणुप्पिया ! तव देवलोग चुए सहोदरे कणीयसे भाउए; से णं उम्मुक्कबालभावे जोव्वणगमणुपत्ते अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए मुंडे जाव पव्वइस्सति। कण्हं वासुदेवं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वदइ, वदित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ॥३८॥

अर्थ—तब हरिणगमेषी देव ने कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय ! देवलोक से च्युत होकर तुम्हारा सहोदर छोटा भाई उत्पन्न होगा। वह बाल्यावस्था से मुक्त होकर, यौवन अवस्था प्राप्त होने पर अर्हत् अरिष्टनेमि के पास मुण्डित होगा यावत् दीक्षा ग्रहण करेगा। देवता ने दो बार और तीसरी बार भी ऐसा कहा। ऐसा कह कर वह जिस दिशा से आया था उसी दिशा में लौट गया ॥३८॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव देवई देवी तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता देवईए देवीए पायग्गहणं करेइ, करेत्ता एवं वयासी—होहिइ णं अम्मो ! मम सहोदरे कणीयसे भाउ त्तिकट्टु देवइं देविं इट्ठाहिं जाव आसासेइ, असासेत्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ॥३९॥

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव पोषधशाला से बाहर निकले और देवकी देवी के पास गए। देवकी देवी के चरण छुए और फिर इस प्रकार कहा—'माता ! मेरे सहोदर छोटे भाई का जन्म होगा' इस प्रकार कह कर देवकी देवी को

आश्वासन दिया। आश्वासन देकर जिस दिशा से आए थे, उसी दिशा में लौट गए ॥३९॥

मूल—तए णं सा देवई देवी अण्णया कयाइं तंसि तारिसगंसि जाव सीहं सुमिणे पासित्ताणं पडिबुद्धा जाव हट्ठतुट्ठ जाव हियया तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहइ ॥४०॥

अर्थ—तत्पश्चात् देवकी देवी ने अन्यदा कदाचित् पुण्यवन्त के शयन करने योग्य उत्तम शय्या पर सोते समय सिंह का स्वप्न देखा। देख कर जागृत हुई यावत् हृष्ट-तुष्ट हृदय वाली हुई। उस गर्भ को सुखे-सुखे वहन करती हुई रहने लगी ॥४०॥

मूल—तए णं सा देवई देवी नवण्हं मासाणं जासुमणारत्तबंधुजीवयलक्खारससरस परिजातकतरुण-दिवाकरसमप्पभं सव्वनयणकंतं सुकुमालं जाव सुरूवं गयतालुयसमाणं दारयं पयाया ॥४१॥

अर्थ—तत्पश्चात् देवकी देवी ने नौ महीने पूर्ण होने पर जपाकुसुम, बधूक के पुष्प, लाक्षारस तथा पारिजात एवं उदित होते हुए सूर्य के समान प्रभा वाले, सब के नेत्रों को प्रिय, सुकुमार यावत् सुन्दर रूप वाले एवं हाथी की तालु के समान बालक को जन्म दिया ॥४१॥

मूल—जम्मणं जहा मेहकुमारे, जाव जम्हा णं अम्ह इमे दारए गयतालुसमाणे तं होउ णं अम्हं एयस्स दारयस्स नामधेज्जे गयसुकुमाले ॥४२॥

अर्थ—जन्मोत्सव ज्ञातासूत्र में वर्णित मेघकुमार के समान समझना चाहिए। यावत् हमारा यह बालक गज की तालु के समान सुकुमार है, अतः हमारे इस बालक का नाम 'गजसुकुमार' हो ॥४२॥

मूल—तए णं तस्स दारयस्स अम्मापियरो नामं करेंति गयसुकुमाले त्ति। सेसं जहा मेहे, जाव

अलं भोगसमत्थे जाते यावि होत्था ॥४३॥

अर्थ—तब माता-पिता ने उस बालक का नाम 'गजसुकुमार' स्थापन किया । शेष वर्णन मेघकुमार के समान समझना चाहिए यावत् वह पूर्ण भोग भोगने में समर्थ हो गया ॥४३॥

मूल—तत्थ णं वारवईए णयरीए सोमिले नामं माहणे परिवसइ, अड्ढे, रिउव्वेय जाव सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था ॥४४॥

अर्थ—द्वारिका नगरी में सोमिल नामक ब्राह्मण निवास करता था । वह ऋद्धिमान् और ऋग्वेद आदि चारों वेदों मे तथा ब्राह्मणों के शास्त्रों में निपुण था ॥४४॥

मूल—तस्स णं सोमिलस्स माहणस्स सोमसिरिणामं माहिणी होत्था, सुकुमाला जाव सुरूवा ॥४५॥

अर्थ—उस सोमिल ब्राह्मण की सोमश्री नामक ब्राह्मणी (भार्या) थी । वह सुकुमारी यावत् सुरूपवती थी ॥४५॥

मूल—तस्स णं सोमिलस्स माहणस्स धूया सोमसिरीए माहणीए अत्तया सोमाणामं दारिया होत्था, सुकुमाला जाव सुरूवा, रूवेणं जाव लावण्णेणं उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा यावि होत्था ॥४६॥

अर्थ—उस सोमिल ब्राह्मण की पुत्री एवं सोमश्री ब्राह्मणी की आत्मजा सोमा नामक लड़की थी । वह सुकुमारी यावत् रूपवती थी । वह रूप यावत् लावण्य से उत्कृष्ट थी और उत्कृष्ट शरीर वाली थी ॥४६॥

मूल—तए णं सा सोमा दारिया अन्नया कयाइ ण्हाया जाव विभूसियो बहूहिं खुज्जाहिं जाव परिक्खित्ता सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव रायमग्गे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्त।

गयमग्गंसि कणगतिंदूसएणं कीलमाणी कीलमाणी चिट्ठइ ॥४७॥

अर्थ—वह सोमा लड़की अन्यदा किसी समय स्नान करके तथा वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर बहुत-सी कुब्जा आदि दासियों से यावत् परिवृत होकर अपने घर से निकली। निकल कर राजपथ की ओर गई और राजपथ पर सोने की गेंद से क्रीड़ा करने लगी ॥४७॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी समोसढे। परिसा णिग्गया।४८॥

अर्थ—उस काल और उस समय मे अर्हत् अरिष्टनेमि का पदार्पण हुआ। धर्मदेशना सुनने के लिए जनसमूह निकला ॥४८॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे ण्हाए जाव विभूसिए, गयसुकुमालेण सद्धिं हत्थिखंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धारिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं अरहओ अरिट्ठनेमिस्स पायवंदए निग्गच्छमाणे सोमं दारियं पासइ, पासित्ता सोमाए दारियाए रूवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जाव विम्हिए ॥४९॥

अर्थ—तब कृष्ण वासुदेव भगवान् के आगमन की बधाई पाकर हृष्ट-तुष्ट हुए। उन्होने स्नान किया यावत् शृंगार किया। फिर कुमार गजसुकुमार के साथ, हाथी पर आरूढ हुए। कोरट की माला का छत्र धारण किया। उत्तम श्वेत चामर ढोरे जाने लगे। इस प्रकार वे द्वारवती नगरी के बीचो बीच होकर अर्हन् अरिष्टनेमि की चरणवन्दना के लिए जा रहे थे कि सोमा लड़की पर उनकी दृष्टि पड़ी। उसके रूप, यौवन और लावण्य को देख कर कृष्ण यावत् विस्मित हुए।४९।

मूल—तए णं कण्हे वासुदेवे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुब्भे

देवाणुप्पिया ! सोमिलं माहणं जाइत्ता सोमं दारियं गेण्हह, गेण्हित्ता कण्णंतेउरंसि पक्खिवह । तए णं एसा गजसुकुमालस्स कुमारस्स भारिया भविस्सइ । तए णं कोडुंबियपुरिसा जाव पक्खिवंति ॥५०॥

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलवाया और बुला कर कहा–देवानुप्रियो ! तुम जाओ और सोमिल ब्राह्मण से याचना करके सोमा लड़की को ग्रहण करो और उसे कन्या–अन्तःपुर में रख दो । बाद में यह लड़की गजसुकुमार कुमार की भार्या होगी । तब कौटुम्बिक पुरुष कृष्ण वासुदेव की आज्ञा के अनुसार यावत् उस लड़की को अतःपुर में रख देते है ॥५०॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे जाव पज्जुवासइ ॥५१॥

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव द्वारवती नगरी के बीचोंबीच होकर निकलते है और जहाँ सहस्राम्रवन नामक उद्यान था, जहाँ अर्हत् अरिष्टनेमि थे, वहाँ जाकर यावत् पर्युपासना करते है ॥५१॥

मूल—तए णं अरहा अरिट्ठनेमी कण्हस्स वासुदेवस्स गयसुकुमालस्स तीसे य धम्मकहा ॥५२॥

अर्थ—तत्पश्चात् अर्हत् अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव को, गजसुकुमार को और उस महापरिषद् को धर्मकथा सुनाई ॥५२॥

मूल—कण्हे पडिगए ॥५३॥

अर्थ—धर्मकथा सुन कर कृष्ण चले गये ॥५३॥

मूल—तए णं गयसुकुमाले अरअहो अरिट्ठनेमिस्स अंतियं धम्मं सोच्चा जाव एवं वयासी—जं नवरं देवाणुप्पिया ! अम्मापियरं आपुच्छामि, जहा मेहो; णवरं महिलियावज्जं, जाव वड्ढियकुले ॥५४॥

अर्थ—तत्पश्चात् गजसुकुमार अर्हत् अरिष्टनेमिनाथ से धर्म श्रवण कर यावत् इस प्रकार बोला—हे देवानुप्रिय ! मैं माता-पिता से आज्ञा लेता हूँ, फिर आपके निकट दीक्षा अंगीकार करूँगा ।

गजसुकुमार ने मेघकुमार की तरह माता-पिता से पूछा । परस्पर प्रश्नोत्तर हुए (जिसमे स्त्रियो का उल्लेख नहीं करना) यावत् कुल की वृद्धि करके दीक्षा लेना, ऐसा कहा ॥५४॥

मूल—तए णं कण्हे वासुदेवे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जेणेव गयसुकुमाले तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता गयसुकुमालं कुमारं आलिंगइ, आलिंगित्ता उच्छंगे निवेसेइ, निवेसित्ता एवं वयासी—तुमं सि णं ममं सहोदरे कणीयसे भाया, तं मा णं देवाणुप्पिया ! इयाणिं अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए मुंडे जाव पव्वयाहि अहण्णं बारवईए नयरीए महया महया रायाभिसेएण अभिसिंचिस्सामि ।५५॥

अर्थ—तब कृष्ण वासुदेव यह समाचार सुनकर गजसुकुमार के पास आये । आकर गजसुकुमार को आलिंगन किया, गोद में बिठलाया और फिर कहा—तू मेरे एक ही छोटा सहोदर भ्राता है । अतएव हे देवानुप्रिय ! इस समय अर्हन्त अरिष्टनेमि भगवान् के निकट मुंडित होकर यावत् प्रव्रजित मत हो । बहुत ठाठ के साथ द्वारिका नगरी के राजा के रूप में तुम्हारा राज्याभिषेक करूँगा ॥५५॥

मूल—तए णं से गयसुकुमाले कुमारे कण्हेणं वासुदेवेणं एवं वुत्ते समाणे तुसिणीए संचिट्ठइ ॥५६॥

अर्थ—तब गजसुकुमार कुमार कृष्ण वासुदेव के इस प्रकार कहने पर मौन हो रहे ॥५६॥

मूल—तए णं से गयसुकुमाले कुमारे कण्हं वासुदेवं अम्मापियरं य दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया ! माणुस्सया कामा खेलासवा जाव विप्पजहियव्वा भविस्संति ॥५७॥

अर्थ—तब गजसुकुमार कुमार ने कृष्ण वासुदेव से और माता-पिता से इस प्रकार कहा-देवानुप्रियो ! मनुष्य सबधी कामभोग श्लेष्म (कफ) के समान है यावत् अवश्य ही त्यागने होगे (तो फिर अभी त्याग देना ही श्रेयस्कर है) ।५७।

मूल—तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए जाव पव्वइत्तए ॥५८॥

अर्थ—अतएव देवानुप्रियो ! मै आपकी अनुमति प्राप्त कर अर्हत् अरिष्टनेमि के पास यावत् दीक्षा अंगीकार करना चाहता हूँ ॥५८॥

मूल—तए णं तं गयसुकुमालं कण्हे वासुदेवे अम्मापियरो य जाहे नो संचाएंति बहुयाहिं अणुलोमाहिं जाव आघवित्तए ताहे अकामाइं चेव एवं वयासी-इच्छामो णं ते जाया ! एगदिवसमवि रज्जसिरिं पासित्तए (तए णं से गयसुकुमाले कण्हेणं वासुदेवणं अम्मापियरेणं एवं वुत्ते समाणे तुसिणीए संचिट्ठइ) ॥५९॥

अर्थ—तब, जब गजसुकुमार को कृष्ण वासुदेव और माता-पिता बहुत-सी अनुकूल बातों से यावत् समझाने में समर्थ न हुए तो इच्छा न होने पर भी इस प्रकार बोले-हे पुत्र ! हम एक दिन के लिए भी तुम्हारी राज्यश्री देखना चाहते है। तब कृष्ण वासुदेव और माता पिता के इस प्रकार कहने पर गजसुकुमार मौन हो रहे ॥५९॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो

देवाणुप्पिया ! गयसुकुमालस्स महत्थं जाव रायाभिसेहं उवट्ठवेह ॥६०॥

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलवा कर कहा—देवानुप्रिय ! शीघ्र ही गजसुकुमार कुमार के महान् अर्थ वाले राज्याभिषेक की तैयारी करो ॥६०॥

मूल – तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव उवट्ठवेंति ।६१॥

अर्थ—तब वे कौटुम्बिक पुरुष यावत् तैयारी करते है ॥६१॥

मूल—तए णं से गयसुकुमाले राया जाए महया जाव विहरति ॥६२॥

अर्थ—तत्पश्चात् गजसुकुमार राजा हुए, महाहिमवान् पर्वत के समान यावत् राज्य करते विचरने लगे ॥६२॥

मूल—तए णं तं गजसुकुमालं अम्मापियरो एवं वयासी—भण जाया ! किं दलयामो ? किं पयच्छामो ? किं वा ते हियइच्छिए ? सामत्थे ? ॥६३॥

अर्थ—तब माता-पिता ने गजसुकुमार से कहा—हे पुत्र ! क्या देवे ? तुम क्या चाहते हो ? क्या तुम्हारी हार्दिक इच्छा है ? तुम क्या करने मे समर्थ हो ? ॥६३॥

मूल—तए णं तस्स गयसुकुमालस्स णिक्खमणं जहा महब्बलस्स णिक्खमणं तहा जाव समंति ।६४॥

अर्थ—तब गजसुकुमार ने तीन लाख द्रव्य श्रीभंडार से ग्रहण करने को कहा । यावत् दीक्षा-उत्सव का कथन जैसा भगवतीसूत्र मे महाबल कुमार का कहा है, वैसा सब यहा भी जान लेना चाहिए, यावत् उन्होने दीक्षा अंगीकार की ।६४।

मूल—तए णं से गयसुमाले जाव अणगारे जाए इरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी ॥६५॥

अर्थ—तब गजसुकुमार यावत् अनगार हो गए। ईर्यासमिति से युक्त यावत् गुप्त ब्रह्मचारी बनें ॥६५॥

मूल—तए णं से गयसुकुमाले अणगारे जं चेव दिवसं पव्वइए तस्सेव दिवसस्स पुव्वावरण्हकाल समयंसि जेणेव अरहा अरिट्ठनेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठनेमिं तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—इच्छामि णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे महाकालंसि सुसाणंसि एगराइयं महापडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए।

अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह ॥६६।

अर्थ—तत्पश्चात् गजसुकुमार नें जिस दिन दीक्षा धारण की, उसी दिन मध्याह्न काल मे जहाँ अरिष्टनेमिनाथ थे, वहाँ आये। आकर तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा की। वदना-नमस्कार किया। फिर कहा—भगवन! आपकी आज्ञा हो तो मैं महाकाल श्मशान मे एकरात्रिकी भिक्षु की महाप्रतिमा अंगीकार करने की इच्छा करता हूँ।

भगवान् ने फर्माया—जैसे सुख उपजे वैसा करो। उसमे विलम्ब मत करो ॥६६॥

मूल—तए णं से गयसुकुमाले अणगारे अरहया अरिट्ठनेमिणा अब्भणुन्नाए समाणे अरहं अरिट्ठनेमिं वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियाओ सहस्संबवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव महाकाले सुसाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता थंडिलं पडिलेहेइ, उच्चार-पासवणभूमिं पडिलेहेइ, ईसिं पब्भारगएणं काएणं जाव दोवि पाए साहट्टु एगराइयं महापडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ॥६७॥

अर्थ—तब गजसुकुमार अनगार अर्हन् अरिष्टनेमि भगवान् से आज्ञा प्राप्त होने पर, अर्हन् अरिष्टनेमि को वन्दना-नमस्कार करके, उनके पास से, सहस्राम्रवन उद्यान से बाहर निकले। निकल कर जहाँ महाकाल श्मशान था, वहाँ पहुँचे। पहुँच कर जमीन की प्रतिलेखना की। फिर कुछ नमे हुए शरीर से यावत् दोनो पैर एक स्थान पर (जिनमुद्रा से) स्थापन करके, एकरात्रिकी भिक्षुप्रतिमा अंगीकार करके विचरने लगे ॥६७॥

मूल—इमं च णं सोमिले माहणे सामिधेयस्स अट्ठाए बारवईओ नयरीओ बहिया पुव्वणिग्गए समिहाओ य दब्भे य कुसे य पत्तामोडं च गेण्हइ, गेण्हित्ता तओ पडिनियत्तइ, पडिनियत्तित्ता महाकालस्स सुसाणस्स अदूरसामंतेणं वीइवयमाणे २ संझाकालसमयंसि पविरलमणुस्संसि गयसुकुमालं अणगारं पासइ, पासित्ता तं वेरं सरइ, सरित्ता आसुरुत्ते एवं वयासी–एस णं भो से गयसुकुमाले कुमारे अप्पत्थिय जाव परिवज्जिए जे णं मम धूयं सोमसिरीए भारियाए अत्तयं सोमं दारियं अदिट्ठदोसपइयं कालवत्तिणिं विप्पजहेत्ता मुंडे जाव पव्वइए तं सेयं खलु ममं गयसुकुमालस्स कुमारस्स वेरणिज्जायणं करेत्तए, एवं संपेहेइ, संपेहित्ता दिसापडिलेहणं करेइ, करित्ता सरसं मट्टियं गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव गयसुकुमाले अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स मत्थए मट्टियाए पालिं बंधइ, बंधित्ता जलंतीओ चियगाओ फुल्लियकिंसुयसमाणे खयरंगारे कहल्लेणं गेण्हइ, गेण्हित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स मत्थए पक्खिवइ, पक्खिवित्ता भीए तओ खिप्पामेव अवक्कमइ, अवक्कमित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ।६८॥

अर्थ—इधर सोमिल ब्राह्मण यज्ञ के लिए लकड़ियां लेने के लिए द्वारवती नगरी से बाहर पहले ही गया हुआ था।

वह लकडियाँ, दर्भ, कुश एवं पत्ते लेकर लौटा। लौटकर महाकाल श्मशान से, न बहुत दूर और न बहुत पास से जा रहा था। मध्या का समय था और विरला ही कोई मनुष्य उधर होकर आता-जाता था। ऐसे समय मे उसने गजसुकुमार अनगार को देखा और देख कर उसे वैर का स्मरण होते ही वह क्रुद्ध हो उठा और बोला-निश्चय यह वही अनिष्ट (मृत्यु) की चाहना करने वाला यावत् लज्जारहित गजसुकुमार कुमार है, जो यौवन अवस्था को प्राप्त मेरी पुत्री, सोमश्री की आत्मजा सोमा को बिना दोष देखे ही त्याग कर मु डित यावत् प्रव्रजित हो गया है। अतएव मुझे गजसुकुमार कुमार से वैर का वदला लेना ही श्रेयस्कर है। सोमिल ब्राह्मण ने ऐसा विचार किया और विचार करके चारों दिशाओं का अवलोकन किया (कि आसपास मे कोई देख तो नही रहा है)। तत्पश्चात् उसने गीली मिट्टी ली और गजसुकुमार अनगार के पास पहुँचा। पहुँच कर गजसुकुमार के मस्तक पर मिट्टी की पाल बाँधी। बाँध कर जलती हुई चिता से, फूले हुए पलाश के फूलो के समान खदिर के अगार एक ठीकरे से ग्रहण किये। ग्रहण करके गजसुकुमार अनगार के मस्तक पर डाल दिये। अगार डाल कर वह भयभीत होकर वहाँ से शीघ्र ही भाग गया और जिधर से आया था, उधर ही लौट गया ॥६८॥

मूल--तए णं से गयसुकुमालस्स अणगारस्स सरीरयंसि वेदणा पाउब्भूया उज्जला जाव दुरहियासा ॥६९।

अर्थ—तत्पश्चात् गजसुकुमार अनगार के शरीर मे अत्यन्त जाज्वल्यमान यावत् दुस्सह वेदना उत्पन्न हुई ॥६९॥

मूल—तए णं से गयसुकुमाले अणगारे सोमिलस्स माहणस्स मणसा वि अप्पदुस्समाणे तं उज्जलं जाव अहियासेइ ॥७०।

अर्थ—उस समय गजसुकुमार अनगार ने सोमिल ब्राह्मण पर मन से भी द्वेष न करते हुए उस उज्ज्वल यावत्

दुस्सह वेदना को सहन किया ॥७०॥

मूल—तए णं तस्स गयसुकुमालस्स अणगारस्स तं उज्जलं जाव अहियासेमाणस्स सुभेणं परिणामेणं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं तदावरणिज्जाण कम्माणं खएणं कम्मरयविकिरणकरं अपुव्वकरणं अणुपविट्ठस्स अणंते अणुत्तरे जाव केवलवरनाणदंसणे, समुप्पण्णे तओ पच्छा सिद्धे जाव पहीणे ॥७१॥

अर्थ—उन जाज्वल्यमान यावत् वेदना को सहन करते हुए गजसुकुमार अनगार को शुभ परिणाम के कारण, प्रशस्त अध्यवसायों के कारण एवं ज्ञानावरण तथा दर्शनावरण कर्म का क्षय हो जाने से समस्त कर्म-रज को दूर करने वाले अपूर्व करण में प्रविष्ट होने पर अनन्त अनुत्तर (सर्वोत्तम) यावत् केवलज्ञान-दर्शन उत्पन्न हो गये। तत्पश्चात् उन्होंने सिद्धि प्राप्त की यावत् वे सदा के लिए समस्त दुःखों से रहित हो गये ॥७१॥

मूल—तत्थ णं अहासंनिहिएहिं देवेहिं 'सम्मं आराहियं' ति कट्टु दिव्वे सुरहिगंधोदए वुट्ठे, दसद्धवण्णे कुसुमे निवाइए, चेलुक्खेवे कए, दिव्वे य गीयगंधव्वनिनाए कए यावि होत्था ॥७२॥

अर्थ—तब वहाँ समीप में रहे हुए देवों ने 'गजसुकुमार मुनि ने सम्यक् आराधना की' ऐसा सोच कर दिव्य सुगंधित गन्धोदक की वर्षा की, पाँच वर्ण के फूलों की वृष्टि की, वस्त्रों की वर्षा करके हर्ष प्रकट किया और गीत एवं गन्धर्वनिनाद किया अर्थात् वाद्यों की ध्वनि की ॥७२॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे पाउप्पभायाए जाव जलंते ण्हाए जाव विभूसिए हत्थिखंधवरगए सकोरेंटमल्लदामेणं छत्तेणं धारिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणाहिं २ महया भडचडगरपहगरवंदपरिक्खित्ते बारवइं नयरिं मज्झं मज्झेणं जाव अरहा अरिट्ठनेमी तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।७३।

अर्थ—तत्पश्चात् दूसरे दिन प्रभात होने पर यावत् जाज्वल्यमान सूर्य के प्रकट होने पर कृष्ण वासुदेव ने स्नान किया यावत् वस्त्रालकारो से विभूषित हुए, फिर हाथी के स्कध पर आरूढ हो, कोरट (कनेर) की माला का छत्र धारण किये हुए, श्वेत चामर विजाते हुए, विशाल भटो के समूहों से परिवृत होकर, द्वारवती नगरी के बीचो बीच होकर अरिष्टनेमि के पास जाने के लिए रवाना हुए ॥७३॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं णिग्गच्छमाणं एगं पुरिसं पासइ-जुण्णं जराजज्जरियदेह जाव किलंतं महइमहालयाओ इट्टगरासीओ एगमेगं इट्टगं गहाय बहिया रत्थापहाओ अंतो गिहं अणुप्पवेसमाणं पासइ ।७४॥

अर्थ—उस समय कृष्ण वासुदेव ने द्वारवती नगरी के बीचों बीच से निकलते हुए एक पुरुष को देखा । वह वृद्ध जरा से जीर्ण तथा थका था । वह ईटो के बहुत बडे ढेर मे से एक-एक ईंट लेकर, बाहर राजमार्ग से होकर घर के भीतर प्रवेश करता था-ईटे घर मे रख रहा था ॥७४॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे तस्स पुरिसस्स अणुकंपणट्ठाए हत्थिखंधवरगए चेव एग इट्टगं गिण्हइ, गिण्हित्ता बहिया रत्थापहाओ अंतोगिहं अणुप्पवेसइ ॥७५॥

अर्थ—तब कृष्ण वासुदेव ने उस पुरुष की अनुकपा के लिए. हस्ती के स्कंध पर बैठे हुए ही एक इंट उठाई । उठा कर बाहर रथ्या पथ (सडक के मार्ग) से अन्दर के घर मे रख दी ॥७५॥

मूल तए णं कण्हेणं वासुदेवेणं एगाए इट्टगाए गहियाए समाणीए अणेगेहिं पुरिससएहिं से महालए इट्टगस्स रासी बहिया रत्थापहाओ अंतोघरंसि अणुप्पवेसिए ॥७६॥

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव के द्वारा एक ईंट उठाने पर अनेक सैंकड़ो पुरुषो ने ईंटों का वह बड़ा ढेर बाहर रथ्यापथ से घर के भीतर रख दिया ॥७६॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठनेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जाव वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता गयसुकुमालं अणगारं अपासमाणे अरहं अरिट्ठनेमिं वंदइ, णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–कहिं णं भंते ! मम सहोदरे कणीयसे भाया गयसुकुमाले अणगारे ? जएणं अहं वंदामि णमसामि ॥७७।

अर्थ—तदनन्तर कृष्ण वासुदेव द्वारिका नगरी के बीचोंबीच होकर निकले । निकले कर जहाँ अर्हत् अरिष्टनेमि थे, वहां पहुँचे । पहुँच कर वन्दन–नमस्कार किया । वन्दन–नमस्कार करने के पश्चात् गजसुकुमार अनगार को न देख कर अर्हत् अरिष्टनेमि से वन्दना–नमस्कार करके पूछा–भगवन् ! मेरे सहोदर लघुभ्राता गजसुकुमार मुनि कहाँ हैं ? उन्हें वन्दना–नमस्कार करूँ ॥७७॥

मूल—तए णं अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–साहिए णं कण्हा ! गयसुकुमालेणं अणगारेणं अप्पणो अट्ठो ।।७८।

अर्थ—तब अर्हत् अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा—कृष्ण ! गजसुकुमार अनगार ने अपना अर्थ–प्रयोजन सिद्ध कर लिया है ॥७८॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठनेमिं एवं वयासी–कहएणं भंते ! गयसुकुमालेणं अणगारेणं साहिए अप्पणो अट्ठे ॥७६॥

अर्थ—तब कृष्ण वासुदेव ने अर्हत् अरिष्टनेमि से कहा–भगवन् ! किस प्रकार गजसुकुमार अनगार ने अपना प्रयोजन सिद्ध किया है ? ॥७६॥

मूल—तए णं अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी-एवं खलु कण्हा ! गयसुकुमालेणं अणगारेणं ममं कल्लं पुव्वावरण्हकालसमयंसि वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-इच्छामि णं जाव उवसंपाज्जित्ताणं विहरइ। तए णं तं गयसुकुमालं अणगारं एगे पुरिसे पासइ, पासित्ता जाव सिद्धे ॥८०॥

अर्थ—तब अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा–हे कृष्ण ! गजसुकुमार अनगार ने कल दोपहर के समय मुझे वन्दन–नमस्कार किया और कहा–'भगवन् ! मै एक दिन की भिक्षुप्रतिमा अगीकार करके विचरना चाहता हूँ।' यावत् वह विचरने लगे। तब गजसुकुमार मुनि को एक पुरुष ने देखा। देखकर उसने उन्हे सहायता दी, जिससे वे यावत् सिद्ध हो गये ॥८०॥

मूल—तं एवं खलु कण्हा ! गयसुकुमालेण अणगारेणं साहिए अप्पणो अट्ठो ॥८१॥

अर्थ—इस प्रकार हे कृष्ण ! गजसुकुमार अनगार ने अपना प्रयोजन सिद्ध कर लिया है ॥८१॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठनेमिं एवं वयासी-से के णं भंते ! पुरिसे अप्पत्थिय-पत्थिए जाव परिवज्जिए, जेणं ममं सहोदरं कणीयसं भायरं गयसुकुमालं अणगारं अकाले चेव जीवियाओ ववरोविए ? ॥८२॥

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने अर्हन्त अरिष्टनेमि से कहा–भगवन् ! वह अप्राथित (मृत्यु) का प्रार्थी यावत् लज्जा से रहित पुरुष कौन है, जिसने मेरे सहोदर छोटे भ्राता गजसुकुमार को अकाल मे ही जीवन रहित कर दिया ॥८२॥

मूल—तए णं अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–मा णं कण्हा ! तुमं तस्स पुरिसस्स पदोसमावज्जाहि, एवं खलु कण्हा ! तेण पुरिसेण गयसुकुमालस्स अणगारस्स साहिज्जे दिण्णे ॥८३॥

अर्थ—तब भगवान् अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से कहा हे कृष्ण ! तुम उस पुरुष पर द्वेष मत करो। हे कृष्ण ! उस पुरुष ने तो गजसुकुमार अनगार को सहायता दी है ॥८३॥

मूल—कहं णं भंते ! से पुरिसे गयसुकुमालस्स साहिज्जे दिण्णे ? तए णं से अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–से नूनं कण्हा ! तुमं मम पायवंदए हव्वमागच्छमाणे बारवईए णयरीए एगं पुरिसं पाससि जाव अणुपवेसिए जहा णं कण्हा ! तुमं तस्स पुरिसस्स साहिज्जे दिण्णे, एवमेव कण्हा ! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स अणगारस्स अणेगभवसयसहस्ससंचियं कम्मं उदीरेमाणेणं बहुकम्मणिज्जरत्थं साहिज्जे दिण्णे ॥८४॥

अर्थ—कृष्ण वासुदेव ने कहा–भगवन् ! उस पुरुष ने गजसुकुमार को किस प्रकार सहायता दी है ?

तब अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से कहा–हे कृष्ण ! तुम मेरे चरण वन्दन के लिए आ रहे थे तब तुमने द्वारिका नगरी में एक पुरुष को देखा था, यावत् अनुकम्पा करके (ईंट उठाकर) उसकी सहायता की थी। तो जिस प्रकार कृष्ण ! तुमने उस पुरुष की सहायता की थी, उसी प्रकार हे कृष्ण ! उस पुरुष ने गजसुकुमार मुनि के कई हजार भवों में संचित कर्मों की उदीरणा करके, बहुत कर्मों की निर्जरा के लिए सहायता दी है ॥८४॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठनेमिं एवं वयासी–से णं भंते ! पुरिसे मए कहं जाणियव्वे ? ॥८५॥

अर्थ—तब कृष्ण वासुदेव ने अर्हन्त अरिष्टनेमि से कहा-भगवन् ! उस पुरुष को मै कैसे पहिचानूं ? ॥८५॥

मूल—तए णं अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—जे णं कण्हा ! तुमं बारवईए णयरीए अणुपविसमाणं पासित्ता ठियए चेव ठिइभेएणं कालं करिस्सइ तएणं तुमं जाणेज्जासि एस णं से पुरिसे ।८६॥

अर्थ—तब अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से कहा—हे कृष्ण ! यहाँ से लौटते हुए द्वारिका नगरी मे प्रवेश करते समय, तुम्हे देखते ही जो पुरुष रुक जाएगा और वही भयभीत होकर स्थिति का भेद होने पर काल पूर्ण करेगा, उसी को तुम जान लेना कि वह पुरुष यही है—जिसने गजसुकुमार को सहायता दी है ॥८६॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठनेमिं वंदइ नमसइ, वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव अभिसेयं हत्थिरयणं तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता हत्थिं दुरुहित्ता जेणेव बारवई णयरी, जेणेव सए गिहे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।८७॥

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने अरिहन्त अरिष्टनेमि को वन्दन-नमस्कार किया । वन्दना-नमस्कार करके जहाँ अपना अभिषेक-प्रधान हस्तीरत्न था, वहाँ पहुँचे और उस पर आरूढ़ हुए । फिर जहाँ द्वारिका नगरी और जहाँ स्वयं का घर था, वहाँ जाने के लिए रवाना हुए ॥८७॥

मूल—तए णं तस्स सोमिलस्स माहणस्स कल्लं जाव जलंते अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पन्ने-एवं खलु कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठनेमिं पायवंदए निग्गए तं नायमेयं अरहया, विण्णायमेयं अरहया, सुयमेयं अरहया सिद्धमेयं अरहया भविस्सइ कण्हस्स वासुदेवस्स, तं न नज्जइ णं कण्हे वासुदेवे ममं केण वि

कुमारेणं मारिस्सइ त्ति कट्टु भीए सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, कण्हस्स वासुदेवस्स बारवइं नयरिं अणुपविसमाणस्स पुरओ सपक्खि सपडिदिसिं हव्वमागए ।।८८।।

अर्थ—तब उस सोमिल ब्राह्मण को प्रातःकाल होने पर यावत् सूर्य के जाज्वल्यमान होने पर इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् उत्पन्न हुआ—निश्चय ही कृष्ण वासुदेव अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान् के चरणों की वन्दना के लिए निकले है, अतएव उन्हे (मेरा दुष्कृत्य) अरिहन्त भगवान् से ज्ञात हो जाएगा, विशेष रूप से ज्ञात हो जाएगा, वे उसे सुन लेंगे; और निश्चय कर लेंगे तब कृष्ण वासुदेव न जाने किस कुमृत्यु से मुझे मारेंगे ! इस प्रकार विचार करके सोमिल भयभीत हुआ और अपने घर से निकल पड़ा और द्वारिका नगरी मे प्रवेश करते हुए कृष्ण वासुदेव के ठीक सामने, उसी दिशा मे आ पहुँचा ।।८८।।

मूल—तए णं से सोमिले माहणे कण्हं वासुदेवं सहसा पासित्ता भीए, ठिए चेव ठिइभेएणं कालं करेइ, धरणितलंसि सव्वंगेहिं धसत्ति संनिवडिए ।।८९।।

अर्थ—तत्पश्चात् वह सोमिल ब्राह्मण कृष्ण वासुदेव को सहसा देख कर भयभीत हो उठा और खड़ा-खडा ही स्थितिभेद हो जाने से मर गया । वह सर्वांग से भूतल पर धड़ाम से गिर पड़ा ।।८९।।

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे सोमिलं माहणं पासइ, पासित्ता एवं वयासी—एस णं भो देवाणुप्पिया ! से सोमिले माहणे अप्पत्थियपत्थिए जाव परिवज्जिए जेण ममं सहोयरे कणीयसे भायरे गयसुकुमाले अणगारे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविए, त्ति कट्टु सोमिल माहणं पाणेहिं कड्ढावेइ, कड्ढावित्ता तं भूमिं पाणिएणं अब्भोक्खावेइ, अब्भोक्खावित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागए, सयं गिहं अणुपविट्ठे ।।९०।।

अर्थ—तब कृष्ण वासुदेव ने सोमिल ब्राह्मण को देख कर कहा—अहो देवानुप्रिय ! यही वह सोमिल ब्राह्मण है अप्रार्थित का प्रार्थी यावत् लज्जा से परिवर्जित ! जिसने मेरे सहोदर लघु भ्राता गजसुकुमार अनगार को असमय मे ही मार डाला ! इस प्रकार कह कर सोमिल ब्राह्मण (के शव) को चांडालो से फिकवा दिया और उस भूमि को पानी से साफ करवाया । फिर अपने घर की ओर आए और घर में प्रविष्ट हुए ॥६०॥

मूल—एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥६१॥

अट्ठमं अज्झयणं समत्तं

अर्थ—श्रीसुधर्मा स्वामी कहते है—हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने अन्तकृद्दशा के तीसरे वर्ग का यह अर्थ कहा है ॥६१॥

आठवां अध्ययन समाप्त



तृतीय वर्ग

नवम् अध्ययन

मूल—नवमस्स उक्खेवओ। एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए नयरीए जहा पढमए जाव विहरइ ॥१॥

अर्थ—नौवें अध्ययन का उपोद्‌घात पूर्ववत् समझ लेना चाहिए। श्रीसुधर्मा स्वामी ने कहा–हे जम्बू! उस काल और उस समय में द्वारिका नामक नगरी थी। शेष सब वर्णन प्रथम गौतम कुमार संबंधी कथन के अनुसार समझ लेना चाहिए, यावत् भगवान् नेमिनाथ पधारे और विचरने लगे ॥१॥

मूल—तत्थ णं बारवईए णयरीए बलदेवे नामं राया होत्था, वण्णओ ॥२॥

अर्थ—द्वारिका नगरी में बलदेव नामक राजा थे, राजा का वर्णन यहाँ समझ लेना चाहिए ॥२॥

मूल—तस्स णं बलदेवस्स रण्णो धारिणी नामं देवी होत्था, वण्णओ ॥३॥

अर्थ—उस बलदेव राजा की धारिणी नामक रानी थी। यहाँ रानी का वर्णन कह लेना चाहिए ॥३॥

मूल— तए णं सा धारिणी सीहं सुमिणे जहा गोयमे, णवरं सुमुहकुमारे, पण्णासं कण्णाओ, पन्ना-सदाओ, चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जइ, वीसं वासाइं परियाओ, सेसं तं चेव जाव सेत्तुंजे सिद्धे ।४।

धारिणी रानी ने स्वप्न मे सिह देखा। सब वर्णन गौतम कुमार के समान समझना चाहिए, विशेषता केवल यही है कि कुमार का नाम सुमुख रक्खा गया। पचास कन्याओं के साथ उसका विवाह हुआ। पचास दात दी। दीक्षा अंगीकार करके चौदह पूर्वों का ज्ञान प्राप्त किया। बीस वर्ष दीक्षा पाली। शेष पूर्ववत् यावत् शत्रुञ्जय पर्वत पर सिद्ध हुए ।।४।।

मूल—निक्खेवओ-एवं दुम्मुहे विं कूवदारए वि, दोण्ह वि बलदेवधारिणीसुया ।।५।।

अर्थ—निक्षेप-इसी प्रकार दुर्मुख और कूपदारक कुमारो का कथन समझना चाहिए। यह दोनों भी बलदेव और धारिणी के पुत्र थे ।।५।।

मूल—दारुए वि एवं चेव, णवरं वासुदेवधारिणीसुए ।।६।।

अर्थ—दारुक कुमार का वृत्तान्त भी ऐसा ही समझना, विशेषता केवल यह है कि वह वासुदेव और धारिणी के पुत्र थे ।।६।।

मूल—एवं अणाधट्ठी वि वासुदेवधारिणीसुए तहेव ।।७।

अर्थ—अनाधृष्टि कुमार का वृत्तान्त भी ऐसा ही है वह वासुदेव और धारिणी के पुत्र थे ।।७।।

मूल—एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स तेरसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ।।८।।

इति तच्चस्स वग्गस्स तेरसमं अज्झयणं समत्तं ।

अर्थ—हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने आठवे अंग अन्तकृद्दशा के तीसरे वर्ग के तेरहवे अध्ययन का यह अर्थ कहा है ॥८॥

तृतीय वर्ग का तेरहवां अध्ययन समाप्त

चतुर्थ वर्ग

मूल—जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं तच्चस्स वग्गस्स तेरस अज्झयणा पन्नता, चउत्थस्स वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं कति अज्झयणा पण्णत्ता ? ॥१॥

अर्थ—जम्बू स्वामी प्रश्न करते हैं-भगवन् ! यदि श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने अन्तगडदसा अंग के तीसरे वर्ग के तेरह अध्ययन कहे है तो चौथे वर्ग के श्रमण भगवान् ने कितने अध्ययन कहे हे ? ॥१॥

मूल—एवं खलु जंबू ! समणेण जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा—

जालि मयालि उवयालि, पुरिससेणे य वारिसेणे य ।
पज्जुन्न संब अनिरुद्धे सच्चनेमी य दढनेमी ॥२॥

अर्थ—श्रीसुधर्मा स्वामी ने उत्तर दिया-हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने चौथे वर्ग के दस अध्ययन कहे है। यथा-(१) जाली कुमार का (२) मयाली कुमार का (२) उवयाली कुमार का (४) पुरुषसेण-कुमार का (५) वारिषेण कुमार का (६) प्रद्युम्न कुमार का (७) शाम्बकुमार का (८) अनिरुद्ध कुमार का (९) सत्यनेमि-कुमार (१०) दृढनेमि कुमार का ॥२॥

मूल—जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ? ।३॥

अर्थ—भगवन् ! यदि श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने चौथे वर्ग के दस अध्ययन कहे है तो प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ कहा है ? ॥३॥

मूल—एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णामं णयरी होत्था। जहा पढमे जाव कण्हे वासुदेवे आहेवच्चं जाव विहरइ। ४॥

अर्थ—इस प्रकार हे जम्बू ! उस काल और उस समय मे द्वारिका नामक नगरी थी। उसका वर्णन प्रथम गौतम कुमार के अध्ययन मे किया गया है, वही यहाँ जानना चाहिए, यावत् कृष्ण वासुदेव उसका शासन कर रहे थे ॥४॥

मूल—तत्थ णं बारवईए णयरीए वसुदेवे राया, धारिणी देवी, वण्णओ। जहा गोयमो णवरं जालिकुमारे, पण्णासाओ दाओ, बारसंगी, सोलस वासाइं परियाओ, सेसं जहा गोयमस्स जाव सेत्तुंजे सिद्धे। ५॥

अर्थ -द्वारिका नगरी मे वसुदेव नामक राजा थे। उनकी रानी का नाम धारिणी था, इत्यादि वर्णन पूर्ववत्

समझना । धारिणी रानी के उदर से जाली कुमार का जन्म हुआ । युवावस्था होने पर पचास कन्याओं के साथ उसका विवाह हुआ । पचास दात दी । भगवान् का उपदेश श्रवण करने पर वैराग्य उत्पन्न हुआ । दीक्षा अंगीकार की । बारह अंगों का अध्ययन किया । सोलह वर्ष तक श्रमणपर्याय पाली । शेष सब वर्णन गौतम कुमार के समान है यावत् शत्रुञ्जय शैल से सिद्धि प्राप्त की ॥५॥

मूल –एवं मयालि उवयालि पुरिससेणे य वारिसेणे य एवं पज्जुन्ने वि त्ति, णवरं कण्हे पिया रुप्पिणी माता । एवं संबे वि णवरं जंबवई माता । एवं अणिरुद्धे वि. णवरं पज्जुण्णे पिया वेदब्भी माया । एवं सच्चनेमी वि, णवरं समुद्दविजए पिया सिवा माता । एवं दढनेमी वि. सव्वे एगगमा । चउत्थस्स वग्गस्स निक्खेवओ ॥६॥

अर्थ—जैसा जाली कुमार का वृत्तान्त कहा, वैसा ही मायाली उपयाली, पुरुषसेण, वारिसेण और प्रद्युम्न कुमारो का भी कहना चाहिए । विशेषता यह कि इन सबके पिता कृष्ण और माता रुक्मिणी थी । शाम्ब कुमार का वृत्तान्त भी ऐसा ही जानना, केवल उनकी माता का नाम जाम्बवती था । अनिरुद्ध कुमार का वृत्तान्त भी ऐसा ही है, केवल उनके पिता प्रद्युम्न थे और माता वैदर्भी थी । सत्यनेमि कुमार का वृत्तान्त भी ऐसा ही है, पर उनके पिता समुद्रविजय और माता शिवा देवी थी । दृढनेमि का वृत्तान्त भी ऐसा ही है । इन सब का अधिकार एक सरीखा है । यहाँ चौथे वर्ग का उपसंहार पूर्ववत् समझना चाहिए ॥६॥

चतुर्थ वर्ग समाप्त



पञ्चम वर्ग

मूल—जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, पंचमस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? ॥१॥

अर्थ—अहो भगवान् ! यदि श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने चौथे वर्ग का यह अर्थ कहा है, तो भगवन् ! उन श्रमण भगवान् यावत् निर्वाणप्राप्त ने अन्तकृद्दशा अग के पाँचवे वर्ग का क्या अर्थ कहा है ? ॥१॥

मूल— एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं पंचमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा—

पउमावई य गोरी गंधारी, लक्खणा सुसीमा य ।
जंबवइ सच्चभामा, रुप्पिणी मूलसिरी मूलदत्ता वि ॥२॥

अर्थ—हे जम्बू ! यावत् निर्वाणप्राप्त श्रमण भगवान् महावीर ने पाँचवे वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं । यथा—(१) पद्मावती रानी का (२) गौरी रानी का (३) गाधारी रानी का (४) लक्ष्मणा रानी का (५) सुसीमा रानी का (६) जम्बूवती रानी का (७) सत्यभामा रानी का (८) रुक्मिणी रानी का यह आठ श्रीकृष्ण की आठ पटरानियाँ है), (९) मूलश्री रानी का (१०) मूलदत्ता रानी का ॥२॥

मूल—जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं पंचमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ? ॥३॥

अर्थ—भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने यदि पंचम वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं तो भगवन् ! प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ कहा है ? ॥३॥

मूल—एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णामं णयरी होत्था, जहा पढमे जाव कण्हे वासुदेवे आहेवच्चं जाव विहरइ ॥४॥

अर्थ—हे जम्बू ! उस काल और उस समय में द्वारिका नामक नगरी थी। उसका वर्णन प्रथम अध्ययन के समान ही जानना। यावत् कृष्ण वासुदेव उसका आधिपत्य कर रहे थे ॥४॥

मूल—तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स पउमावई नामं देवी होत्था, वण्णओ ॥५॥

अर्थ—उन कृष्ण वासुदेव की पद्मावती नामक रानी थी। यहां रानी का वर्णन समझ लेना चाहिए ॥५॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी जाव समोसढे जाव विहरइ ॥६॥

अर्थ—उस काल और उस समय में अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान् पधारे यावत् विचरने लगे ॥६॥

मूल—कण्हे निग्गए जाव पज्जुवासइ ॥७॥

अर्थ—कृष्ण वासुदेव और जनसमूह भगवान् को वन्दना करने के लिए निकले यावत् पर्युपासना करने लगे ॥७॥

मूल—तए णं सा पउमावई देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठा जहा देवई जाव पज्जुवासइ ॥८॥

अर्थ—तब पद्मावती रानी को यह वृत्तान्त विदित हुआ। वह हर्षित हुई और जिस प्रकार देवकी रानी वंदना करने गई थी, उसी प्रकार पद्मावती रानी भी गई यावत् भगवान् की उपासना करने लगी ॥८॥

मूल—तए णं अरहा अरिट्ठनेमी कण्हस्स वासुदेवस्स पउमावईए देवीए जाव धम्मकहा। परिसा पडिगया ॥९।

अर्थ—तत्पश्चात् अर्हन्त अरिष्टनेमि भगवान् ने कृष्ण वासुदेव को और पद्मावती देवी को तथा उपस्थित परिषद् को धर्मकथा सुनाई। धर्मकथा सुनने के बाद परिषद् वापिस चली गई ॥९॥

मूल—तए णं कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठनेमिं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—इमीसे णं भंते! बारवईए णयरीए दुवालसजोयणआयामाए णवजोयणवित्थिन्नाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए किंमूलए विणासे भविस्सइ? ॥१०॥

अर्थ—तब कृष्ण वासुदेव ने अरिहन्त अरिष्टनेमि को वंदन-नमस्कार किया और फिर प्रश्न किया—'भगवन्! बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी और साक्षात् देवलोक के समान इस द्वारिका नगरी का विनाश किस कारण से होगा?' ॥१०॥

मूल—'कण्हा!' इ अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—एवं खलु कण्हा! इमीसे बारवईए नयरीए नवजोयणविच्छिन्नाए जाव देवलोगभूयाए सुरग्गिदीवायणमूलाए विणासे भविस्सइ ॥११॥

अर्थ—'कृष्ण' इस प्रकार सबोधन करके अर्हत् अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से कहा—इस प्रकार हे कृष्ण! नौ योजन वीस्तीर्ण यावत् देवलोक के सदृश इस द्वारिका नगरी का विनाश सुरा (मदिरा), अग्नि और द्वीपायन ऋषि के निमित्त से होगा ॥११॥

मूल—तए णं कण्हस्स वासुदेवस्स अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पन्ने-धन्ना णं ते जालि-मयालि-उवयालि-पुरिससेण-वारिसेण-पज्जुण्ण संब-अनिरुद्ध-दढनेमि-सच्चनेमि-पभिइओ कुमारा जे णं चिच्चा हिरण्णं जाव परिभाएत्ता अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतियं मुंडा जाव पव्वइया; अहण्णं अधण्णे अकयपुण्णे रज्जे य जाव अंतेउरे य माणुस्सएसु य कामभोगेसु मुच्छिए ४, नो सचाएमि अरहओ अरिट्ठनेमिस्स जाव पव्वइत्तए ।१२-१३॥

अर्थ—अर्हन् अरिष्टनेमि के मुखारविन्द से यह बात सुन कर और उसे अवधारण करके कृष्ण वासुदेव के मन में इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ-अहा, जाली मयाली, उपयाली, पुरुषषेण, वारिसेण, प्रद्युम्न, शाम्ब, अनिरुद्ध, दृढनेमि और सत्यनेमि वगैरह कुमार धन्य हैं जो हिरण्य (चादी-सोना आदि) का त्याग करके यावत् उसका विभाग करके अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान् के निकट दीक्षित हुए हैं। मैं अधन्य हूं, मैंने पुण्य का सचय नही किया है। मै राज्य मे यावत् अन्तःपुर मे एव मनुष्य सबधी कामभोगो मे मूर्छित हूँ और अर्हन्त अरिष्टनेमि के निकट दीक्षा अंगीकार करने मे समर्थ नहीं हो पाता हूँ ॥१२-१३॥

मूल—कण्हाइ अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी-'से नूणं कण्हे ! तव अयं अज्झत्थिए जाव समुप्पन्ने-धन्ना णं ते जाली जाव पव्वइत्तए, से णूण कण्हा ! अट्ठे समट्ठे ?,

'हंता, अत्थि' ॥१४॥

अर्थ—'हे कृष्ण' इस प्रकार संबोधन करके अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से कहा-'कृष्ण ! तुम्हे, ऐसा विचार उत्पन्न हुआ है कि ये जाली कुमार आदि धन्य है यावत् मै दीक्षा ग्रहण करने मे असमर्थ हूँ। हे कृष्ण ! यह बात ठीक है ?

श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया–हाँ भगवन् ! सत्य है, मुझे ऐसा विचार आया है ॥१४॥

मूल—तं नो खलु कण्हा ! तं एयं भूयं वा भव्वं वा भविस्सइ वा जन्नं वासुदेवा चइत्ता हिरण्णं जाव पव्वइस्संति ॥१५॥

अर्थ—तब भगवान् ने कहा–कृष्ण ! ऐसा कभी हुआ नही, होता नही और होगा भी नही कि वासुदेव हिरण्य आदि का त्याग करके दीक्षा ग्रहण करे ॥१५॥

मूल—से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ न एवं भूयं जाव पव्वइस्संति ?

अर्थ—कृष्णजी ने प्रश्न किया–भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा है कि ऐसा हुआ नही, होता नही, होगा भी नही कि वासुदेव दीक्षा धारण करे ?

मूल—कण्हाइ अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–एवं खलु कण्हा ! सव्वे वि य णं वासुदेवा पुव्वभवे नियाणकडा, से एएणं अट्ठेणं कण्हा ! एवं वुच्चइ न एयं भूयं जाव पव्वइस्संति ॥१६॥

अर्थ—'कृष्ण' इस प्रकार सबोधन करके अर्हत् अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से कहा–हे कृष्ण ! सभी वासुदेव पूर्व भव मे निदान (नियाणा) करते है, इस कारण ऐसा कहा है कि ऐसा हुआ नहीं, होता नही, होगा नही कि वासुदेव दीक्षा धारण करे ॥१६॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठनेमिं एवं वयासी–अहं णं भंते ! इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गमिस्सामि ? कहिं उववज्जिस्सामि ? ॥१७॥

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने अर्हत् अरिष्टनेमि से प्रश्न किया—भगवन्! मैं काल के अवसर पर काल करके यहाँ से कहाँ जाऊँगा? कहाँ उत्पन्न होऊँगा? ॥१७॥

मूल—तए णं अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—एवं खलु कण्हा! तुमं बारवईए नयरीए सुरग्गिदीवायणकोवनिद्दड्ढाए अम्मापिइनियगविप्पहूणे रामेण बलदेवेण सद्धिं दाहिणवेयालिं अभिमुहे जुहिट्ठिलपामोक्खाणं पंचण्हं पंडवाणं पंडुरायपुत्ताणं पासं पंडुमहुरं संपत्थिए कोसंबवणकाणणे नग्गोहवरपायवस्स अहे पुढविसिलापट्टए पीयवत्थपच्छाइयसरीरे जराकुमारेणं तिक्खेणं कोदंडविप्पमुक्केणं इसुणा वामे पाए विद्धे समाणे कालमासे कालं किच्चा तच्चाए वालुयप्पभाए पुढवीए उज्जलिए नरए नेरइयत्ताए उववज्जिहिसि।१८।

अर्थ—तब अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से कहा—हे कृष्ण! सुरा, अग्नि और द्वीपायन ऋषि के कोप से द्वारिका नगरी के भस्म हो जाने पर तुम माता, पिता एवं अन्य स्वजनो से बिछुड कर केवल राम बलदेव के साथ, दक्षिणी समुद्र के किनारे की ओर, पण्डु राजा के पुत्र युधिष्ठिर आदि पांच पाण्डवो के पास पाण्डु-मथुरा को जाने के लिए रवाना होओगे। मार्ग मे कौशाम्र वृक्ष के कानन मे, एक उत्तम वट वृक्ष के नीचे, पृथ्वीशिलापट्टक पर पीत वस्त्र से तुम्हारा शरीर आच्छादित होगा। उस समय जराकुमार अपने धनुप से एक तीक्ष्ण वाण छोडेगा। वह तुम्हारे वाएँ पैर मे बिध जाएगा। तब कालमास मे काल करके तुम तीसरी वालुकाप्रभा पृथ्वी मे उज्वलित नामक नरक मे नारक रूप मे जन्म लोगे ॥१८॥

मूल—तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म ओहय जाव झियायइ ॥१९॥

अर्थ—नेमिनाथ भगवान् के मुखारविन्द से अपना भविष्य सुन कर कृष्ण वासुदेव चिन्तित हो गये—आर्त्तध्यान ध्याने लगे ॥१९॥

मूल—कण्हाइ! अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी मा णं तुम देवाणुप्पिया! ओहय जाव झियाहि, एवं खलु तुमं देवाणुप्पिया! तच्चाओ पुढवीओ उज्जलियाओ नरयाओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे आगमेस्साए उस्सप्पिणीए पुंडेसु जणवएसु सयदुवारे णयरे बारसमे अममे नामं अरहा भविस्ससि। तत्थ णं तुमं बहुइं वासाइं केवलिपरियागं पाउणित्ता सिज्झिहिसि।२०॥

अर्थ—'कृष्ण!' इस प्रकार सबोधन करके अर्हत् अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से कहा—हे देवानुप्रिय! तुम चिन्तित मत होओ, आर्त्तध्यान मत करो। देवानुप्रिय! तुम तीसरी पृथ्वी से, उज्ज्वलित नरक से निकल कर सीधे इसी जम्बूद्वीप मे, भरतक्षेत्र मे, आगामी उत्सर्पिणी काल मे, पुड्र नामक जनपद मे, शतद्वार नामक नगर मे बारहवे अमम नामक तीर्थंकर होओगे। उस पर्याय मे तुम बहुत वर्षों तक केवली अवस्था मे रहकर सिद्धि प्राप्त करोगे ॥२०॥

मूल—तए णं कण्हे वासुदेवे अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठे अप्फोडेइ, अप्फोडित्ता वग्गइ, वग्गइत्ता तिवइं छिंदइ, छिंदित्ता सीहनायं करेइ, करित्ता अरहं अरिट्ठनेमिं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता तमेव अभिसेक्कं हत्थिरयणं दुरूहइ, दुरूहित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सए सीहासणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयइ, निसीइत्ता कोडुं-बियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुमे देवाणुप्पिया! बारवईए नयरीए सिंघाडग जाव घोसेमाणे एवं वदह—एवं खलु देवाणुप्पिया! बारवईए णयरीए नवजोयण जाव देवलोगभूयाए सुरग्गिदीवा-

यगमूलए विणासे भविस्सइ, तं जे णं देवाणुप्पिया! इच्छंति बारवईए नयरीए राया वा जुवराया वा ईसर तलवर मांडविय–कोडुंविय–इब्भ–सेट्ठी वा देवी वा कुमारो वा कुमारी वा अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए मुंडे जाव पव्वइत्तए तं णं कण्हे वासुदेवे विसज्जइ, पच्छातुरस्स वि य से अहापवित्तं वित्तिं अणुजाणइ, महया इड्ढीसक्कार समुदएणं य से निक्खमणं करेइ दोच्चं पि तच्चं पि घोसणयं घोसेह, घोसइत्ता मयं एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह ॥२१॥

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव, अर्हन्त अरिष्टनेमि के मुख से इस अर्थ को सुन कर तथा अवधारण करके हर्षित और सन्तुष्ट हुए। उन्होंने हर्ष से ताल ठोकी, और मल्ल की तरह तीन पैर पीछे हट कर खडे हो गए। सिंहनाद किया। फिर भगवान् अरिष्टनेमि को वन्दन–नमस्कार किया। तत्पश्चात् अपने प्रधान हाथी पर आरुढ होकर जहाँ द्वारिका नगरी और जहां अपना भवन था, उधर आये। प्रधान हाथी से उतर कर जहाँ बाह्य सभाभवन और अपना सिंहासन था, उधर गये। वहां जाकर पूर्व दिशा मे मुख करके अपने उत्तम सिंहास पर आसीन हुए। फिर कोडुम्बिक पुरुषो को बुलाकर बोले—

हे देवानुप्रियो! तुम जाओ और द्वारिका नगरी के शृङ्गाटक (तिकोने) आदि मार्गो मे यह घोषणा करो कि—'हे देवानुप्रियो! नौ योजन चौडी, बारह योजन लम्बी एव साक्षात् देवलोक के समान इस द्वारिका नगरी का सुरा, अग्नि और द्वैपायन के निमित्त से विनाश होने वाला है, अतएव हे देवानुप्रियो! द्वारिका नगरी का जो भी कोई राजा, युवराज, ईश्वर, तलवर, माडविक, कोडुम्बिक, इभ्य, सेठ, रानी, कुमार या कुमारी अर्हन्त अरिष्टनेमि के समीप मुंडित एवं दीक्षित होना चाहता हो, उन्हें कृष्ण वासुदेव उसके लिए आज्ञा देते हैं। उनके पीछे जो कुटुम्ब रहेगा, उसकी चिन्ता–सारसंभाल हम करेंगे और दीक्षा ग्रहण करने वाले का दीक्षा–उत्सव खूब ठाठ के साथ करेंगे।' दो बार तीन बार यह घोषणा करो और मेरी आज्ञा मुझे वापिस लौटाओ ॥२१॥

मूल—तए णं कोडुंबिय जाव पच्चप्पिणंति ।।२२।

अर्थ—तत्पश्चात् वे कौटुम्बिक पुरुष इस प्रकार की घोषणा करके यावत् आज्ञा वापिस लौटाते है, अर्थात् आज्ञानुसार कार्य करने की सूचना करते हैं ।।२२।।

मूल—तए णं सा पउमावई देवी अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया अरहं अरिट्ठनेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं से जहेयं तुब्भे वदह, जं नवरं देवाणुप्पिया ! कण्हं वासुदेवं आपुच्छामि, तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडा जाव पव्वयामि ।

'अहासुहं देवाणुप्पिए ! मा पडिबंधं करेह' ।।२३।।

अर्थ—तब पद्मावती देवी अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान् के निकट धर्म श्रवण करके और उसे हृदयंगम करके हर्षित एव सन्तुष्ट हुई । उसका हृदय विकसित हो गया । उसने अरिहन्त अरिष्टनेमि को वन्दना-नमस्कार करके कहा-भगवन् ! मैं निर्ग्रंथप्रवचन पर श्रद्धा करती हूँ । आपने जो कुछ फर्माया है, वह सब यथार्थ है । हे देवानुप्रिय ! केवल मैं कृष्ण वासुदेव से पूछ लेती हूँ और फिर देवानुप्रिय के निकट दीक्षा अंगीकार करूँगी ।

तब भगवान् ने फर्माया-देवानुप्रिये ! जिसमें तुम्हे सुख उपजे, वैसा करो । उसमे ढील न करो ।।२३।।

मूल—तए णं सा पउमावई देवी धम्मियं जाणप्पवरं दुरूहइ, दुरूहित्ता जेणेव वारवई नयरी, जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ, जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव कट्टु कण्हं वासुदेवं एव वयासी-इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं

अब्भणुण्णाया समाणी अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतिए मुंडा जाव पव्वइउं । 'अहासुहं देवाणुप्पिए ।'

अर्थ—तत्पश्चात् पद्मावती देवी धार्मिक (धर्मकार्य मे प्रयुक्त होने वाले) रथ पर आरूढ होकर जिधर द्वारिका नगरी और जिधर अपना भवन था, उधर चली और वहा पहुँच कर धार्मिक रथ से नीचे उतरी। फिर कृष्ण वासुदेव के पास जाकर और हाथ जोड कर यावत् मस्तक पर अजलि करके कृष्ण वासुदेव से बोली—'हे देवानुप्रिय ! आपकी अनुमति पाकर मैं अर्हन्त अरिष्टनेमि भगवान् के निकट मुडित एव दीक्षित होना चाहती हूँ।'

कृष्ण वासुदेव ने कहा—'देवानुप्रिये ! जिसमे तुम्हे सुख उपजे, वैसा करो' ॥२४॥

मूल—तए ण से कण्हे वासुदेवे कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! पउमावईए देवीए महत्थ निक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेह, उवट्ठवित्ता एयं आणत्तियं पच्चप्पिणह । तए ण ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पिणंति ॥२५।

अर्थ—तब कृष्ण वासुदेव ने कौटुम्बिक पुरुषो को बुला कर कहा—देवानुप्रियो ! शीघ्र ही पद्मावती देवी के महान् अर्थ वाले—बहुत व्यय वाले—दीक्षाभिषेक की तैयारी करो और मेरी आज्ञा वापिस लौटाओ । तब कौटुम्बिक पुरुषो ने दीक्षाभिषेक की तैयारी करके यावत् आज्ञा वापिस लौटाई ॥२५॥

मूल—तए ण से कण्हे वासुदेवे पउमावइं देविं पट्टयंसि दुरूहइ, दुरूहित्ता अट्ठसएणं सोवण्णकलस जाव निक्खमणाभिसेएणं अभिसिंचइ, अभिसिंचित्ता सव्वालंकारविभूसियं करेइ, करित्ता पुरिससहस्सवाहिणिं सिवियं दुरूहावेइ, दुरूहावेत्ता बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव रेवयए पव्वए, जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सिवियं ठवेइ, ठवेत्ता पउमावई देवी सीयाओ पच्चो—

रुहइ, पच्चोरुहित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठनेमि तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठनेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी- एस णं भंते ! मम अग्गमहिसी पउमावई नामं देवी मम इट्ठा कंता पिया मणुण्णा मणामा अभिरामा जाव किमंग पुण पासणयाए, तण्णं अह देवाणुप्पिया । सिस्सिणीभिक्खं दलयामि; पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया ! सिस्सिणीभिक्खं । 'अहासुहं' ।२६।

अर्थ—तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने पद्मावती देवी को पाट पर बिठलाया और एक सौ आठ सोने के कलशों से यावत् निष्क्रमण–अभिषेक से अभिषिक्त किया । अभिषेक करके सर्व अलंकारों से विभूषित किया । फिर हजार पुरुषों द्वारा उठाई जाने वाली पालकी मे बिठलाया । द्वारिका नगरी के बीचोंबीच से निकल कर जहाँ रैवतक (गिरनार) पर्वत था और जहाँ सहस्राम्रवन नामक उद्यान था, वहाँ पहुँचे । वहाँ पहुँचने पर पालकी रोकी गई और पद्मावती देवी उससे नीचे उतरी । जहाँ भगवान् अरिष्टनेमि थे, वहाँ पहुँच कर और तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा करके वन्दन–नमस्कार किया । वन्दन–नमस्कार के पश्चात् कृष्ण वासुदेव ने निवेदन किया–भगवन् ! यह मेरी पटरानी पद्मावती देवी है । यह मुझे इष्ट, प्रिय, मनोज्ञ, अतिशय मनोहर, अभिराम है । यावत् पुनः इसका दर्शन ही दुर्लभ है । ऐसी इस देवी को, हे देवानुप्रिय ! मैं शिष्यनीभिक्षा के रूप मे आपको समर्पित करता हूँ । देवानुप्रिय मेरी यह शिष्यनीभिक्षा अंगीकार करें ।

तब भगवान् ने फर्माया–जैसे सुख हो, वही करो । उसमें ढील न करो ॥२६॥

मूल—तए णं सा पउमावई देवी उत्तरपुच्छिमं दिसिभागं अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सयमेव आभरणालंकारं ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठनेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठनेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी- आलित्ते णं भंते ! जाव धम्ममाइक्खिउं ॥२७॥

अर्थ—तत्पश्चात् पद्मावती देवी उत्तरपूर्व दिशा–ईशान कोण मे गई। सर्व अलकार अपने ही हाथ से उतारे। अपने ही हाथ से पचमुष्टिक लोच किया। लोच करने के बाद अर्हन्त अरिष्टनेमि के समीप पहुँची। वहाँ पहुँच कर भगवान् को वन्दना–नमस्कार किया और फिर कहा–भगवन्! यह संसार जन्म जरा मरण आदि के दु.खों से जल रहा है, अतिशय जल रहा है। अतएव मै आपकी शरण मे आई हूँ। आप मुझे दीक्षा प्रदान करे और धर्म का उपदेश करे ॥२७॥

मूल—तए णं अरहा अरिट्ठनेमी पउमावइं देविं सयमेव पव्वावेइ, पव्वावित्ता सयमेव मुंडावेइ, सयमेव जक्खिणीए अज्जाए सिस्सिणित्ताए दलयति ॥२८॥

अर्थ—तब अर्हन्त अरिष्टनेमि भगवान् ने पद्मावती देवी को स्वयमेव दीक्षा दी, स्वयमेव मुंडित किया और स्वयमेव यक्षिणी नामक आर्या को शिष्या के रूप मे प्रदान किया ॥२८॥

मूल—तए णं सा जक्खिणी अज्जा पउमावइं देविं सयमेव पव्वावेइ, पव्वावेत्ता जाव संजमियव्वं ॥२९॥

अर्थ—तब यक्षिणी आर्या ने पद्मावती देवी को स्वयमेव प्रव्रजित की अर्थात् हितशिक्षा दी यावत् सयम की साधना करके इन्द्रियों को जीतना, आदि उपदेश दिया ॥२९॥

मूल—तए णं सा पउमावई अज्जा जाया इरियासमिया जाव गुत्तबंभयारिणी ॥३०॥

अर्थ—तब वह पद्मावती आर्या हो गई, ईर्यासमिति मे युक्त यावत् गुप्त ब्रह्मचर्य को धारण करने वाली ॥३०॥

मूल—तए णं सा पउमावई अज्जा जक्खिणीए अज्जाए अंतिए सामाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूइं चउत्थ-छट्ठ-ट्ठम-दसम-दुवालसेहिं मासद्धमासक्खमणेहिं विविहेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणा विहरइ ॥३१॥

अर्थ—तत्पश्चात् पद्मावती आर्या ने यक्षिणी आर्या के निकट सामायिक से प्रारभ करके ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। अध्ययन करके बहुत-से उपवास, बेला, तेला, चोला, पचोला, अर्ध मासखमण, मासखमण आदि विविध प्रकार के तपश्चरणों द्वारा अपनी आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ॥३१॥

मूल—तए णं सा पउमावई अज्जा बहुपडिपुन्नाइं वीसं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसेइ, झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे मुंडभावे जाव तमट्ठं आराहेइ चरिमुस्सासेहिं सिद्धा ॥३२।

पंचमवग्गस्स पढमज्झयणं समत्तं।

अर्थ—पद्मावती आर्या ने पूरे बीस वर्ष तक साधु-पर्याय का पालन किया, एक मास की सलेखना का सेवन किया, अनशन करके साठ भक्तो का छेदन किया और जिस प्रयोजन की सिद्धि के लिए नग्नभाव एवं मुंडभाव अगीकार किया जाता है, उस प्रयोजन (मुक्ति) की आराधना की। अन्तिम श्वासोच्छ्वास मे सिद्धि प्राप्त की ॥३२॥

पांचवें वर्ग का प्रथम अध्ययन समाप्त



द्वितीय अध्ययन

मूल—उक्खेवओ बीय अज्झयणस्स । तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णयरी, रेवयए पव्वए, णंदणवणे उज्जाणे ॥१॥

अर्थ—दूसरे अध्ययन की भूमिका समझ लेनी चाहिए। उस काल और उस समय मे द्वारिका नगरी थी। रैवतक पर्वत था। नन्दनवन नामक उद्यान था ॥१॥

मूल—तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हे वासुदेवे राया होत्था, तस्स णं कण्हवासुदेवस्स गोरी देवी, वण्णओ। २॥

अर्थ—उस द्वारिका नगरी मे कृष्ण वासुदेव राजा थे। कृष्ण वासुदेव की गौरी अग्रमहिषी थी, उनका वर्णन समझ लेना चाहिए ॥२॥

मूल—अरहा अरिट्ठनेमी समोसढे ॥३।

अर्थ—अर्हन्त अरिष्टनेमि भगवान् पधारे ॥३॥

मूल—कण्हे निग्गए, गोरी जहा पउमावई तहा णिग्गया, धम्मकहा, परिसा पडिगया कण्हे वि ।४।

अर्थ—कृष्ण वासुदेव वंदना करने के लिए निकले। गौरी रानी भी पद्मावती रानी की तरह निकली। धर्मकथा सुनी। परिषद् लौट गई और कृष्णजी भी वापिस लौट गये ॥४॥

मूल—तए णं सा गोरी जहा पउमावई तहा निक्खंता जाव सिद्धा ॥५॥

अर्थ—तत्पश्चात् गौरी देवी ने पद्मावती की तरह दीक्षा अंगीकार की और उसी प्रकार ज्ञानोपार्जन करके, तपश्चरण करके तथा सलेखना करके यावत् सिद्धि प्राप्त की ॥५॥

द्वितीय अध्ययन समाप्त

३–८ अध्ययन

मूल—एवं गंधारी, एवं लक्खणा, एवं सुसीमा, एवं जंबवती, सच्चभामा, रुप्पिणी, एवं अट्ठ वि पउमावइ–सरिसाओ "अट्ठ अज्झयणा समत्ता"

अर्थ—इसी प्रकार गाधारी, लक्ष्मणा, सुसीमा, जाम्बवती, सत्यभामा और रुक्मिणी नामक रानियों का वृत्तान्त जानना चाहिए। इन आठों का एक-सा पद्मावती के समान ही अधिकार है।

आठ अध्ययन समाप्त

९–१० अध्ययन

मूल—उक्खेवओ य नवमस्स, तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णयरी, रेवयए पव्वए, नंदणवणे,

उज्जाणे, कण्हे वासुदेवे राया ।।१।।

अर्थ—नौवें अध्ययन की भूमिका समझ लेना चाहिए, अर्थात् जंबू स्वामी ने प्रश्न किया कि श्रमण भगवान् महावीर ने आठवें अध्ययन का यह अर्थ कहा है ? तो नौवें अध्ययन का क्या अर्थ कहा है, तब श्री सुधर्मा स्वामी ने उत्तर दिया—उस काल और उस समय मे द्वारिका नामक नगरी थी। रैवतक पर्वत था। नन्दनवन नामक उद्यान था। कृष्ण वासुदेव राजा थे ।।१।।

मूल— तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हस्स वासुदेवस्स पुत्तए जंबवतीए देवीए अत्तए संबे नामं कुमारे होत्था, अहीण० । तस्स णं संबस्स कुमारस्स मूलसिरी नाम भारिया होत्था, वण्णओ ।।२-३।।

अर्थ—द्वारिका नगरी मे कृष्ण वासुदेव का पुत्र और जाम्बवती का आत्मज साम्ब कुमार था। वह परिपूर्ण इन्द्रियो वाला आदि विशेषणो से युक्त था। साम्ब की पत्नी का नाम मूलश्री था, उका वर्णन जान लेना चाहिए ।।२-३।।

मूल—अरहा अरिट्ठनेमी समोसढे, कण्हे णिग्गए, मूलसिरी वि णिग्गया, जहा पउमावई, नवरं देवाणुप्पिया ! कण्हं वासुदेवं आपुच्छामि, जाव सिद्धा । एवं मूलदत्ता वि ।।४।। दसमं अज्झयणं समत्तं।

पंचमो वग्गो समत्तो

अर्थ—अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान् का पदार्पण हुआ। कृष्णजी वन्दना करने के लिए निकले। मूलश्री भी निकली। धर्मोपदेश श्रवण कर मूलश्री ने पद्मावती की भांति कृष्ण वासुदेव की आज्ञा लेकर दीक्षा ग्रहण करने की इच्छा प्रगट की तत्पश्चात् आज्ञा लेकर दीक्षा ली यावत् सिद्धि प्राप्त की। इत्यादि वृत्तान्त पद्मावती के समान समझना चाहिए। मूलदत्ता का अधिकार मूलश्री के समान समझना चाहिए ।।४।।

पाँचवा वर्ग समाप्त

षष्ठ वर्ग

मूल—जइ णं भंते ! छट्ठस्स उक्खेवओ; नवरं सोलस अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा—

मंकई किंकमे चेव, मोग्गरपाणी य कासवे ।
खेमए धितिधरे चेव, केलासे हरिचंदणे ।१॥
वारत्त-सुदंसणे,-पुण्णभद्द सुमणभद्द सुपइट्ठे मेहे ।
अत्तिमुत्ते अ अलक्खे-अज्झयणाणं तु सोलसयं ॥२॥

अर्थ—भगवन् ! यदि श्रमण भगवान् महावीर ने पाँचवे वर्ग का यह अर्थ कहा है तो छठे वर्ग का क्या अर्थ कहा है ? ऐसा उत्क्षेप पूर्ववत् जानना; विशेष यह है कि छठे वर्ग के सोलह अध्ययन कहे है । यथा–(१) मंकाई गाथापति (२) किकम गाथापति (३) मुद्गरपाणि यक्ष (अर्जुन–माली) (४) काश्यप गाथापति (५) क्षेमक गाथापति (६) धृतिधर गाथा–पति (७) कैलाश गाथापति (८) हरिचदन गाथापति (९) वारत्त गाथा पति (१०) सुदर्शन गाथापति (११) पूर्णभद्र गाथापति (१२) सुमनभद्र गाथापति (१३) सुप्रतिष्ठ गाथापति (१४) मेघ गथापति (१५) अतिमुक्त कुमार और (१६) अलक्ष्य राजा यह सोलह अध्ययनों के नाम है ।।१–२।।

मूल—जइ सोलस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ?

अर्थ—यदि छठे वर्ग के सोलह अध्ययन कहे हैं तो हे भगवन् ! प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ कहा है ?

मूल—एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णगरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया ।१।

अर्थ—हे जम्बू ! उस काल और समय में राजगृह नगर था । गुणशिलक नामक चैत्य था और श्रेणिक राजा था ।१।

मूल—तत्थ णं मंकाई णामं गाहावई परिवसइ, अड्ढे जाव अपरिभूए ॥२॥

अर्थ—उस राजगृह नगर में मंकाई नामक गाथापति रहता था । वह ऋद्धिमान् यावत् कभी किसी के द्वारा पराभव होने वाला नहीं था ॥२॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे आइगरे जाव गुणसिलए जाव विहरइ । परिसा णिग्गया ॥३॥

अर्थ—उस काल और उस समय में धर्मतीर्थ की आदि करने वाले श्रमण भगवान् महावीर पधारे यावत् गुणशिलक चैत्य में यावत् विचरने लगे । भगवान् की चरणवन्दना करने के लिए परिषद् निकली ॥३॥

मूल—तए णं से मंकाई गाहावई इमीसे कहाए लद्धट्ठे जहा पण्णत्तीए गंगदत्तो तहेव, इमो वि जेट्ठपुत्तं कुडुंबे ठावित्ता, पुरिससहस्सवाहिणीए सीयाए निक्खंते जाव अणगारे जाए-इरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी ।४॥

अर्थ—तब मंकाई गाथापति भगवान् के आगमन का वृत्तान्त श्रवण कर हर्षित हुआ । यावत् भगवती सूत्र में वर्णित

गंगदत्त के समान वड़े पुत्र को कुटुम्व में स्थापित करके, हजार पुरुषों द्वारा वहन करने योग्य पालकी मे बैठ कर भगवान् के पास आए यावत् दीक्षा धारण की । वह ईर्यासमिति से युक्त एव गुप्त ब्रह्मचारी अनगार बने ।।४।।

मूल—तए णं से मंकाई अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयाइं एक्कारसंगाइं अहिज्जइ, सेसं जहा खंधयस्स । गुणरयणं तवोकम्मं, सोलस वासाइं परियाओ, तहेव विउले सिद्धे ।।५।।

अर्थ—तत्पश्चात् मकाई अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के तथारूप स्थविरो के निकट सामायिक से ले कर ग्यारह अगों तक का अध्ययन किया । शेष वृत्तान्त भगवती में कथित स्कधक मुनि के समान जानना । गुणरत्न-सवत्सर तप किया । सोलह वर्ष दीक्षा पाली और उसी प्रकार विपुलाचल से सिद्धि प्राप्त की ।।५।।

छट्ठवग्गस्स पढमज्झयणं समत्तं ।

छठे वर्ग का प्रथम अध्ययन समाप्त

द्वितीय अध्ययन

मूल—दोच्चस्स उक्खेवओ । किंकमे वि एवं चेव जाव विउले सिद्धे ।।१।।

अर्थ—दूसरे अध्ययन का उत्क्षेप । किकम नामक गाथापति का कथन प्रथम अध्ययन मे कथित मकाई गाथापति के समान ही समझना चाहिए यावत् विपुलगिरि से सिद्धि प्राप्त की ।

बीयं अज्झयणं समत्तं ।

द्वितीय अध्ययन समाप्त

तृतीय अध्ययन

मूल—तच्चस्स उक्खेवओ । तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नयरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया चिल्लणा देवी ।१॥

अर्थ—तीसरे अध्ययन का उत्क्षेप कहना । उस काल और उस समय मे राजगृह नगर था । गुणशिलक नामक चैत्य था । श्रेणिक राजा था । चेलना रानी थी ॥१॥

मूल—तत्थ णं रायगिहे णयरे अज्जुणए णामं मालागारे परिवसइ, अड्ढे जाव अपरिभूए ॥२॥

अर्थ—राजगृह नगर मे अर्जुन नामक माली निवास करता था । वह ऋद्धिमान् यावत् अपराभूत था ॥२॥

मूल—तस्स णं अज्जुणयस्स मालागारस्स बंधुमतीणामं भारिया होत्था, सुकुमाला जाव सुरूवा ३।

अर्थ—उस अर्जुन मालाकार की बन्धुमति नामक पत्नी थी । वह सुकुमार यावत् सुन्दर रूप वाली थी ॥३॥

मूल—तस्स णं अज्जुणयस्स मालागारस्स रायगिहस्स बहिया एत्थ णं महं एगे पुप्फारामे होत्था, किण्हे जाव निकुरम्बभूए, दसद्धवन्नकुसुमकुसुमिए पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे ॥४॥

अर्थ—राजगृह नगर से बाहर अर्जुन माली का एक बड़ा पुष्पाराम (फूलों का बगीचा) था । वह सघन हरियाली

से कृष्णवर्ण था। पाँच वर्ण के फूल वहाँ फूले रहते थे। दर्शकों के चित्त को प्रसन्न करने वाला, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप था—उसे देखते-देखते नेत्र थकते नही थे और पुनः पुनः नया रूप दिखाई देता था ॥४॥

मूल—तस्स णं पुप्फारामस्स अदूरसामंते एत्थ णं अज्जुणयस्स मालागारस्स अज्जय-पज्जय-पिइपज्जयागए अणेग कुलपुरिसपरपरागए मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था, पोराणे दिव्वे सच्चे जहा पुण्णभद्दे ॥५॥

अर्थ—उस पुष्पाराम से न बहुत दूर, न बहुत निकट (पुष्पाराम के अन्दर) मुद्गरपाणि नामक यक्ष का यक्षायतन (मन्दिर) था। वह अर्जुन माली के पिता दादा, पडदादा, आदि अनेक पीढियों से मान्य, प्राचीन, दिव्य और सच्चा था। उववाई सूत्र मे पूर्णभद्र चैत्य का जैसा वर्णन है, वही यहाँ जान लेना चाहिए ॥५॥

मूल—तत्थ णं मोग्गरपाणिस्स पडिमा एगं महं पलसहस्सणिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं गहाय चिट्ठइ ।६।

अर्थ—उस यक्षमन्दिर मे मुद्गरपाणि नामक यक्ष की प्रतिमा एक हजार पल * वजन के लोहे के मुद्गर को लिये हुई थी ॥६॥

मूल—तए णं से अज्जुणए मालागारे बालप्पभिइं चेव मोग्गरपाणिजक्खस्स भत्ते यावि होत्था, कल्लाकल्लिं पच्छियपिडगाइं गेण्हइ, गेण्हित्ता रायगिहाओ नगराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव पुप्फारामे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पुप्फुच्चयं करेइ, करित्ता अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय जेणेव मोग्गर-

* पाँच रत्ती का एक माशा, सोलह माशो का एक सोनैया (अर्थात् तीन टाका का एक सोनैया) और चार सोनया का एक पल होता है।

पाणिस्स जक्खायघणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स महरिहं पुप्फच्चयणं करेइ, करित्ता जाणुपायवडिए पणामं करेइ, करित्ता तओ पच्छा रायमग्गंसि वित्तिं कप्पमाणे विहरइ ॥७॥

अर्थ—अर्जुन माली बचपन से ही मुद्गरपाणि यक्ष का भक्त था। वह प्रतिदिन बांस की टोकरी लेकर राजगृह नगर से निकलता और पुष्पाराम में आता। वहां जाकर पुष्पों का चयन करता, फिर प्रधान और उत्तम फूल लेकर मुद्गरपाणि यक्ष के मन्दिर में जाता और मुद्गरपाणि यक्ष का महार्ह पुष्पार्चन करता था। तत्पश्चात् जमीन पर घुटने टेक कर प्रणाम करता और उसके बाद राजमार्ग पर पुष्पादि बेच कर अपनी आजीविका चलाता था ॥७॥

मूल—तत्थ णं रायगिहे णयरे ललिया णामं गोट्ठी परिवसइ, अड्ढा जाव अपरिभूया, जंकयसुकया यावि होत्था ॥८॥

अर्थ—उस राजगृह नगर में ललिता नामक गोष्ठी (मित्र मंडली) रहती थी, वह समृद्ध यावत् किसी से हार खाने वाली नहीं थी। यह मंडली जो कुछ भी करती वह अच्छा ही कहलाता था—क्योंकि उसके विरुद्ध बोलने का किसी में साहस नहीं था ॥८॥

मूल—तए णं रायगिहे णयरे अण्णया कयाइ-पमोए घुट्ठे यावि होत्था। ९॥

अर्थ—राजगृह नगर में किसी समय प्रमोद की—हर्षोत्सव मनाने की घोषणा हुई ॥९॥

मूल—तए णं से अज्जुणए मालागारे कल्लं पभूयतराएहिं पुप्फेहिं कज्जमिति कट्टु पच्चूसकाल-समयंसि बंधुमतीए भारियाए सद्धिं पच्छियपिडयाइं गेण्हइ, गेण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता रायगिहं नयरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फारामे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता

बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फुच्चयं करेइ ॥१०॥

अर्थ—तब अर्जुन माली ने विचार किया—कल (उत्सव के कारण) बहुत से फूलों की आवश्यकता होगी। ऐसा विचार करके प्रभात काल मे वह बन्धुमती भार्या के साथ फूलों की टोकरी लेकर अपने घर से निकला और राजगृह नगर के बीच में होकर अपने पुष्पाराम मे पहुँचा वहाँ पहुँच कर उसने बन्धुमती भार्या के साथ फूल चुनना आरंभ किया।१०।

मूल—तए णं तीसे ललियाए गोट्ठीए छ गोट्ठिल्ला पुरिसा जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाय-यणे तेणेव उवागया, अभिरममाणा चिट्ठंति ॥११।

अर्थ—तब उस ललिता गोष्ठी के छह गोठिया (मित्र) पुरुष मुद्गरपाणि यक्ष के मन्दिर मे पहुँचे और वहाँ क्रीडा करने लगे ॥११॥

मूल—तए ण से अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फुच्चयं करेइ, करित्ता अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ ॥१२॥

अर्थ—तत्पश्चात् अर्जुन माली ने बन्धुमती भार्या के साथ पुष्पों का चयन किया। पुष्पचयन करके उनमें से प्रधान और उत्तम पुष्प लेकर वह मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षायतन मे पहुँचा ॥१२॥

मूल—तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा अज्जुणयं मालागारं बंधुमईए भारियाए सद्धिं एज्जमणं पासइ. पासित्ता अन्नमन्नं एवं वयासी—एस णं देवाणुप्पिया ! अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं इहं हव्वमागच्छइ, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं अज्जुणयं मालागारं अवओडयबंधणयं करेत्ता बन्धुमईए भारियाए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणाणं विहरित्तए त्ति कट्टु एयमट्ठं अन्नमन्नस्स पडिसुणेंति,

पडिगुणित्ता कवाडंतरेसु निलुक्कंति, निच्चला निप्फंदा तुसिणीया पच्छण्णा चिट्ठंति । १३॥

अर्थ—उस समय उन छह गोठिया पुरुषो ने अर्जुन मालाकार को बन्धुमती भार्या के साथ आता देखा । देख कर वे आपस मे कहने लगे—देवानुप्रियो ! यह अर्जुन माली बन्धुमती भार्या के साथ इधर आ रहा है तो हमारे लिए अच्छा होगा कि हम अर्जुन माली को मुश्कें बाँध कर बन्धुमती भार्या के साथ विपुल भोग भोगें । उन लोगो ने यह कथन आपस में मान्य किया । वे यक्षायतन के किवाडो के पीछे छिप कर निश्चल, निस्पन्द, मौन होकर दुबक रहे ॥१३॥

मूल—तए णं से अज्जुणए मालागारे बंधुमतीए भारियाए सद्धिं जेणेव मोग्गरपाणिजक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता आलोए पणामं करेइ, करित्ता महरिहं- पुप्फच्चणं करेइ, करित्ता जाणुपायवडिए पणामं करेइ ॥१४॥

अर्थ—तत्पश्चात् अर्जुन माली अपनी बन्धुमती भार्या के साथ मुद्गरपाणि यक्ष के मन्दिर मे पहुँचा । पहुँच कर दृष्टि पड़ते ही उसने यक्ष की प्रतिमा को नमस्कार किया । नमस्कार करके महार्ह (बड़ो के योग्य) पुष्पार्चन किया और फिर घुटनो पर घुटने टेक कर प्रणाम किया ॥१४॥

मूल—तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा दवदवस्स कवाडंतरेहिंतो णिग्गच्छंति, णिग्गच्छित्ता अज्जुणयं मालागारं गेण्हंति, गेण्हित्ता अवओडगबंधणं करेंति, करित्ता बंधुमतीए मालागारीए सद्धिं विपुलाइं भोग-भोगाइं भुंजमाणा विहरंति ॥१५॥

अर्थ—उसी समय वे छह गोठिया पुरुष दबादब (झटपट) किवाड़ो के पीछे से निकले । निकल कर उन्होंने अर्जुन माली को पकड़ लिया । उसके हाथ-पैर बांध दिये और बन्धुमती मालिन के साथ मन चाहे भोग भोगते हुए विचरने लगे ।१५।

मूल—तए णं तस्स अज्जुणयस्स मालागारस्स अयं अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—एवं खलु अहं बालप्पभिइं चेव मोग्गरपाणिस्स भगवओ कल्लाकल्लिं जाव वित्तिं कप्पेमाणे विहरामि, तं जइ णं मोग्गरपाणिजक्खे इह सण्णिहिते होंते, से णं ममं-एयारूवं आवइं पावेज्जमाणं पासंते ? तं णत्थि णं मोग्गरपाणि-जक्खे इह सनिहिते । सुव्वत्तं तं एस कट्ठे ॥१६ ।

अर्थ—उस समय अर्जुन माली के मन मे ऐसा विचार उत्पन्न हुआ—मै बचपन से ही प्रतिदिन मुद्गरपाणि भगवान् की पुष्पपूजा भक्ति करता आ रहा हूँ और इनकी पूजा करने के पश्चात् ही अपनी आजीविका करता हूँ। सो यदि मुद्गरपाणि यक्ष यहाँ इस प्रतिमा मे या समीप मे होते तो क्या मुझे इस आपत्ति मे पड़ा हुआ देख सकते ? (कदापि नही ।) वास्तव मे मुद्गरपाणि यक्ष यहाँ समीप मे नही है । स्पष्ट ही यह कष्ट मात्र है ॥१६॥

मूल—तए णं से मोग्गरपाणिजक्खे अज्जुणयस्स मालागारस्स अयमेयारूवं अज्झत्थियं जाव वियाणत्ता अज्जुणयस्स मालागारस्स सरीरयं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता तडतडस्स बंधणाइं छिंदइ, तं पलसहस्स-णिप्फन्नं अयोमयं मोग्गरं गेण्हइ, गेण्हित्ता ते इत्थिसत्तमे छ पुरिसे घाएइ । १७॥

अर्थ—तब मुद्गरपाणि यक्ष ने अर्जुन माली के इस विचार-अध्यवसाय को जान लिया । उसी समय अर्जुन माली के शरीर मे प्रवेश किया । उसके प्रवेश करते ही सारे बधन तड़ातड़ टूट गये । उसने एक हजार पल के लोहमय मुद्गर को ग्रहण किया और उन छह पुरुषो का तथा सातवी स्त्री का घात कर डाला ।

तए णं से अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं अण्णाइट्ठे समाणे रायगिहस्स नयरस्स परिपेरंतेणं कल्लाकल्लिं छ इत्थिसत्तमे पुरिसे घाएमाणे विहरइ ॥१८॥

अर्थ—तदनन्तर अर्जुन माली मुद्गरपाणि यक्ष के द्वारा अधिष्ठित होकर राजगृह नगर के चारों ओर घूमने लगा और प्रतिदिन छह पुरुषों और सातवीं स्त्री का घात करने लगा ॥१८॥

मूल—तए णं रायगिहे नयरे सिंघाडग जाव महापहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ ४— एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्जुण मालागारे मोग्गरपाणिणा अण्णाइट्ठे समाणे रायगिहे नयरे बहिया छ इत्थि-सत्तमे पुरिसे घाएमाणे विहरइ ॥१९॥

अर्थ—तब राजगृह नगर में, शृंगाटकों (तिकोने मार्ग) में यावत् महापथों में बहुत-से लोग आपस में इस प्रकार कहने लगे—देवानुप्रियो ! अर्जुन माली मुद्गरपाणि यक्ष के द्वारा अधिष्ठित होकर राजगृह नगर से बाहर छह पुरुषों को और सातवीं स्त्री को प्रतिदिन मार डालता है ॥१९॥

मूल—तए णं से सेणिए राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्जुणए मालागारे जाव घाएमाणे विहरइ, तं मा णं तुब्भे केई तणस्स वा कट्ठस्स वा पाणियस्स वा पुप्फफलाणं वा अट्ठाए सइ णिग्गच्छउ; मा णं तस्स सरीरस्स वावत्ती भविस्सइ त्ति कट्टु दोच्चं पि तच्चं पि घोसणयं घोसेह, घोसित्ता खिप्पामेव ममेयं पच्चप्पिणह । २० ।

अर्थ—श्रेणिक राजा ने उक्त समाचार सुन कर कौटुम्बिक पुरुषों को बुलवाया । बुलवा कर कहा-देवानुप्रियो ! अर्जुन माली छह पुरुषों और सातवीं स्त्री का घात करता विचरता है, अतएव तुम नगर में इस प्रकार की घोषणा कर दो कि-देवानुप्रियो ! तुममें से कोई भी काष्ठ के लिए, घास के लिए, पानी के लिए या फूल-फल के लिए, नगर के बाहर एक बार भी न जाये । कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे शरीर का विनाश हो जाए ।' ऐसी घोषणा दो बार और तीन बार करके मेरी आज्ञा वापिस करो ॥२०॥

मूल— तए णं कोडुंबिय जाव पच्चप्पिणंति ॥२१॥

अर्थ—तत्पश्चात् कौटुम्बिक पुरुष यावत् घोषणा करके आज्ञा वापिस लौटाते है ॥२१॥

मूल—तत्थ णं रायगिहे नयरे सुदंसणे नामं सेट्ठी परिवसइ, अड्ढे ॥२२॥

अर्थ—राजगृह नगर में सुदर्शन नामक श्रेष्ठी (सेठ) निवास करता था। वह ऋद्धिशाली तथा किसी से पराभव पाने वाला नहीं था ॥२२॥

मूल—तए णं से सुदंसणे समणोवासए यावि होत्था, अभिगमयजीवाजीवे जाव विहरइ ॥२३॥

अर्थ—सुदर्शन श्रेष्ठी श्रमणोपासक (श्रावक) था। वह जीवाजीव आदि नौ पदार्थों का ज्ञाता था, यावत् चौदह प्रकार का दान देता हुआ विचरता था ॥२३॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव समोसढे जाव विहरइ ॥२४॥

अर्थ—उस काल और उस समय मे श्रमण भगवान् महावीर यावत् राजगृह नगर में पधारे यावत् नगर से बाहर गुणशिलक चैत्य मे तप-संयम से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे ॥२४॥

मूल—तए णं रायगिहे णयरे सिंघाडग जाव महापहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ २ जाव किमंग पुण विपुलस्स अट्ठस्स गहणयाए ॥२५॥

अर्थ—तब राजगृह नगर मे शृङ्गाटक यावत् महापथों मे बहुत-से लोग आपस में यो कहने लगे यावत् प्ररूपण करने लगे कि-देवानुप्रियो ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी यावत् गुणशिलक चैत्य मे विचरते है, उनके नाम मात्र का श्रवण करना ही महान् फलदायक है, तो फिर उनके मुखारविन्द से धर्मकथा सुनने और प्रश्नों का उत्तर पाने की तो बात ही क्या है ॥२५॥

मूल—तए णं तस्स सुदंसणस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-एवं खलु समणे जाव विहरइ, तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि नमंसामि, एवं संपेहेइ, संपेहित्ता जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव कट्टु एवं वयासी-एवं खलु अम्मयाओ ! समणे जाव विहरइ, तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि जाव पज्जुवासामि ॥२६॥

अर्थ—तब बहुत जनों के मुख से यह वृत्तान्त सुन कर और हृदयगम करके सुदर्शन सेठ को ऐसा विचार उत्पन्न हुआ—श्रमण भगवान् महावीर स्वामी यावत् विचर रहे हैं, अतएव मैं जाऊँ और श्रमण भगवान् महावीर को वंदना-नमस्कार करूँ। इस प्रकार विचार करके सुदर्शन अपने माता-पिता के पास गया और दोनों हाथ जोड कर तथा मस्तक पर अंजलि करके इस प्रकार कहने लगा-माता-पिता ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी पधारे हैं, अतएव मैं जाता हूँ और श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना-नमस्कार करके पर्युपासना करूँगा ॥२६॥

मूल—तए णं तं सुदंसणसेट्ठिं अम्मापियरो एवं वयासि-एवं खलु पुत्ता ! अज्जुणए मालागारे जाव घाएमाणे विहरइ, तं मा णं तुमं पुत्ता ! समणं भगवं महावीरं वंदए णिग्गच्छाहि, मा णं तव सरीरयस्स वावत्ती भविस्सइ। तुमएणं इहगए चेव समणं भगवं महावीरं वंदाहि नमंसाहि ॥२७॥

अर्थ—तब सुदर्शन सेठ के माता-पिता ने उससे कहा—हे पुत्र ! अर्जुन माली यावत् घात करता फिरता है। तुम श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना करने जाओगे तो कहीं ऐसा न हो कि अर्जुन माली के द्वारा शरीर को बाधा हो। अतएव तुम वहाँ न जाओ। यहाँ रहे हुए ही श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना-नमस्कार करो ॥२७॥

मूल—तए णं से सुदंसणे सेट्ठी अम्मापियरं एवं वयासी किण्णं अहं अम्मयाओ ! समणं भगवं महा-

वीरं इहमागयं, इह पत्तं, इह समोसढं इह गए चेव वंदिस्सामि नमंसिस्सामि ? तं गच्छामि णं अहं अम्म-
याओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे समणं भगवं महावीरं वंदामि जाव-पज्जुवासामि ॥२८॥

अर्थ तब सुदर्शन सेठ ने माता-पिता से ऐसा कहा-अहो माता-पिता ! श्रमण भगवान् महावीर यहाँ
आये है, यहाँ प्राप्त हुए है, यहाँ पधारे है, फिर मैं यही घर पर रह कर कैसे वन्दना करूँ ? हे माता-पिता ! मैं आपकी
आज्ञा पाकर वहाँ जाना चाहता हूँ और श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना करना चाहता हूँ यावत् उपासना करना
चाहता हूँ ॥२८॥

मूल — तए णं तं सुदंसणसेट्ठिं अम्मापियरो जाहे नो संचाएन्ति बहूहिं आघवणाहिं ४ जाव परू-
वणाहि य परूवित्तए ततो णं ते एवं वयासी-अहासुहं ॥२९॥

अर्थ—तत्पश्चात् सुदर्शन सेठ को उसके माता-पिता जब बहुत प्रकार से कह कर यावत् प्ररूपणा करके समझाने
में समर्थ न हुए तो इच्छा न होने पर भी बोले-जैसे तुम्हे सुख हो, वैसा करो ॥२९॥

मूल—तए णं से सुदंसणे अम्मापिईहिं अब्भणुन्नाए समाणे ण्हाए सुद्धप्पावेसाइं जाव सरीरे
सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता पायविहारचारेणं रायगिहं नयरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ,
निग्गच्छित्ता मोग्गरपाणिस्स जक्खाययणस्स अदूरसामंतेणं जेणेव गुणसिलए चेइए, जेणेव समणे भगवं महा-
वीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥३०॥

अर्थ—तदनन्तर सुदर्शन सेठ ने माता-पिता की अनुमति पाकर स्नान किया। शुद्ध एव सभा मे प्रवेश करने योग्य
वस्त्र धारण किये। शरीर को विभूषित किया। फिर अपने घर से निकल कर पैदल चलता हुआ, राजगृह नगर के बीचों-

होकर मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षालय के कुछ पास से जहाँ गुणशिलक चैत्य और जहाँ श्रमण भगवान् महावीर थे, उसी ओर गमन करने लगा ॥३०॥

मूल—तए णं से मोग्गरपाणी जक्खे सुदंसणं समणोवासयं अदूरसामंतेणं वीइवयमाणं पासइ, पासित्ता आसुरुत्ते तं पलसहस्सनिप्फन्नं अओमयं मोग्गरं उल्लालेमाणे उल्लालेमाणे जेणेव सुदंसणे समणोवासए तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥३१॥

अर्थ—उस समय मुद्गरपाणि यक्ष ने सुदर्शन श्रावक को, न बहुत दूर और न बहुत पास से, जाते देखा देखते हीवह क्रुद्ध हुआ । एक हजार पल प्रमाण वजन वाले लोहे के उस मुद्गर को उछालता-घुमाता हुआ सुदर्शन श्रावक की तरफ ही जाने लगा ॥३१॥

मूल—तए णं से सुदंसणे समणोवासए मोग्गरपाणिं जक्खं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता अभीए अतत्थे अणुव्विग्गे अक्खुभिए अचलिए असंभंते वत्थंतेणं भूमिं पमज्जइ, पमज्जित्ता करयल जाव एवं वयासी—नमोत्थु णं अरहंताणं जाव संपत्ताणं, णमोत्थु णं समणस्स भगवओ जाव संपाविउकामस्स; पुव्विं पि णं मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ थूलए पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए, थूलए मुसावाए, थूलए अदिन्नादाणे, सदारसंतोसे कए जावज्जीवाए, इच्छापरिमाणे कए जावज्जीवाए, तं इयाणिं पि तस्सेव अंतियं सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जावज्जीवाए सव्वं मुसावायं, सव्वं अदत्तादाणं, सव्वं मेहुणं, सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि जावज्जीवाए, सव्वं कोहं जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि जावज्जीवाए, सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए । जइ णं एत्तो उवसग्गाओ मुच्चिस्सामि

तो मे कप्पइ पारेत्तए, अह णं एत्तो उवसग्गाओ न मुच्चिस्सामि, तओ मे तहा पच्चक्खाए चेव त्ति कट्टु सागारं पडिमं पडिवज्जइ ॥३२॥

अर्थ—तव सुदर्शन श्रमणोपासक ने मुद्गरपाणि यक्ष को आता देखा। देख करके वह डरा नही, त्रास पाया नहीं, उद्विग्न हुआ नही, क्षुब्ध हुआ नही, चलित हुआ नही, घबराया नही, परन्तु वस्त्र से भूमि का प्रमार्जन किया। भूमि का प्रमार्जन करके, हाथ जोड कर, मस्तक पर अंजलि करके इस प्रकार बोला—नमस्कार हो अरिहन्तों को यावत् मुक्ति प्राप्तों को। नमस्कार हो श्रमण भगवान् महावीर को जो यावत् मुक्ति के अभिलाषी है। मैने पहले भी श्रमण भगवान् महावीर के निकट स्थूल प्राणातिपात का जीवनपर्यन्त के लिए त्याग किया था, इसी प्रकार स्थूल मृषावाद का स्थूल अदत्तादान का त्याग किया था, स्वस्त्रीसंतोष व्रत धारण किया था, और जीवन पर्यन्त के लिए इच्छा परिमाण किया था, मगर अब उन्ही भगवन्त के निकट यावज्जीवन सर्वथा प्राणातिपात का त्याग करता हू, सर्वथा मृषावाद का, अदत्तादान का, मैथुन और परिग्रह का यावज्जीवन के लिए त्याग करता हूं, सर्वथा प्रकार से क्रोध का यावत् मिथ्या-दर्शनशल्य का अर्थात् अठारहों पापस्थानकों का और यावज्जीवन के लिए अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप चारों प्रकार के आहार का त्याग करता हू। अगर मै इस उपसर्ग से मुक्त हो जाऊंगा तो मुझे इन प्रत्याख्यानों को पारना कल्पता है। यदि इस उपसर्ग से मुक्त न होऊं तो यह प्रत्याख्यान जैसे किये है वैसे ही रहे। ऐसा सकल्प करके सुदर्शन ने सागारी अनशन अगीकार किया ॥३२॥

मूल—तए णं से मोग्गरपाणी जक्खे तं पलसहस्सनिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं उल्लालेमाणे-उल्लालेमाणे जेणेव सुदंसणे समणोवासए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता नो चेव णं संचाएति सुदंसणं समणोवासयं तेयसा समभिपडित्तए ॥ ३३ ॥

अर्थ—तब मुद्गरपाणि यक्ष उस हजार पल प्रमाण भारवाले लोहे के मुद्गर को उछालता-उतारता हुआ, जहां सुदर्शन श्रमणोपासक था, वहां आया। मगर सुदर्शन श्रमणोपासक को उपसर्ग करने-पीडा पहुंचाने मे समर्थ नही हुआ ।३३।

मूल—तए णं से मोग्गरपाणी जक्खे सुदंसणं समणोवासयं सव्वओ समंता परिघोलेमाणे-परिघोलेमाणे जाहे नो संचाएइ सुदंसणं समणोवासयं तेयसा समभिपडित्तए ताहे सुदंसणस्स समणोवासयस्स पुरओ सपक्खिं सपडिदिसिं ठिच्चा सुदंसणं समणोवासयं अणिमिसाए दिट्ठीए सुचिरं निरिक्खइ, निरिक्खित्ता अज्जुणयस्स मालागारस्स सरीरं विप्पजहइ, विप्पजहित्ता तं पलसहस्सणिप्फन्नं अयोमयं मोग्गरं गहाय जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ।३४॥

अर्थ—तब मुद्गरपाणि यक्ष सुदर्शन श्रावक के चारों ओर फिरने लगा। फिर भी जब वह सुदर्शन श्रावक को कष्ट पहुंचाने में समर्थ नहीं हुआ, तब सुदर्शन श्रमणोपासक के ठीक सामने खड़ा होकर सुदर्शन श्रावक को अपलक दृष्टि से बहुत देर तक देखता रहा। देखने के बाद उस यक्ष ने अर्जुन माली के शरीर का परित्याग कर दिया और हजार पल प्रमाण लोहमय मुद्गर को लेकर जिस ओर से आया था, उसी ओर अर्थात देवालय की ओर चला गया ॥ ३४ ॥

मूल—तए णं से अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं विप्पमुक्के समाणे धसत्ति धरणीतलंसि सव्वंगेहिं संनिवडिए ॥ ३५ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् जब अर्जुन माली को मुद्गरपाणि यक्ष ने त्याग दिया तो वह धड़ाम से धरती पर सर्वांग से गिर पड़ा ॥ ३५ ॥

मूल—तए णं से सुदंसणे समणोवासए निरुवसग्गमिति कट्टु पडिमं पारेइ ॥ ३६ ॥

अर्थ—तब सुदर्शन श्रमणोपासक ने 'उपसर्ग दूर हुआ' ऐसा जानकर सागारिक प्रतिमा (प्रतिज्ञा) को पार लिया ॥ ३६ ॥

मूल—तए णं से अज्जुणए मालागारे तओ मुहुत्तंतरेणं आमत्थे समाणे उट्ठेइ, उट्ठित्ता सुदंसणं समणोवासयं एवं वयासी–तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! के ? कहिं वा संपत्थिया ? । ३७ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् वह अर्जुन मालाकार थोडी देर मे आश्वस्त होकर (होश–हवास मे आकर) उठा। उठ कर उसने सुदर्शन श्रमणोपासक से कहा–देवानुप्रिय ! तुम कौन हो ? कहां जा रहे हो ? ॥ ३७ ॥

मूल—तए णं से सुदंसणे समणोवासए अज्जुणयं मालागारं एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पिया ! अहं सुदंसणे णामं समणोवासए अभिगयजीवाजीवे, गुणसिलए चेइए समणं भगवं महावीरं वंदित्तए संपत्थिए । ३८ ॥

अर्थ—तब सुदर्शन श्रावक ने अर्जुन मालाकार से कहा–हे देवानुप्रिय ! मैं सुदर्शन नामक श्रमणोपासक हू। जीव और अजीव का जानकार हू। गुणशिलक चैत्य मे श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना करने के लिए जा रहा हू ॥ ३८ ॥

मूल—तए णं अज्जुणए मालागारे सुदंसणं समणोवासयं एवं वयासी–इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! अहमवि तुमए सद्धिं समणं भगवं महावीरं वंदित्तए जाव पज्जुवासित्तए ।

'अहासुहं देवाणुप्पिया' । ३९ ॥

अर्थ—तब अर्जुन माली ने सुदर्शन श्रमणोपासक से इस प्रकार कहा—देवानुप्रिय ! मैं भी तुम्हारे साथ श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना करने और उनकी उपासना करने की अभिलाषा करता हूँ।

तब सुदर्शन ने कहा—जैसे तुम्हें सुख उपजे, वैसा ही करो ॥३९॥

मूल—तए णं से सुदंसणे समणोवासए अज्जुणएणं मालागारेणं सद्धिं जेणेव गुणसिलए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अज्जुणएणं मालागारेणं सद्धिं समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासइ । ४० ।

अर्थ—तब सुदर्शन श्रमणोपासक अर्जुन माली के साथ जिधर गुणशिलक चैत्य और जिधर श्रमण भगवान् महावीर थे, उधर ही पहुँचा। पहुँच कर उसने अर्जुन माली के साथ श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार प्रदक्षिणा करके यावत् पर्युपासना की ॥४०॥

मूल—तए णं समणे भगवं महावीरे सुदंसणस्स समणोवासयस्स अज्जुणयस्स तीसे य धम्मकहा। सुदंसणे पडिगए ॥४१॥

अर्थ—तब श्रमण भगवान महावीर ने सुदर्शन श्रावक को, अर्जुन को और उपस्थित समूह को धर्मकथा कही। धर्मकथा सुन कर सुदर्शन लौट गया ॥४१॥

मूल—तए णं से अज्जुणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव एवं वयासी—सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं जाव अब्भुट्ठेमि ? 'अहासुहं देवाणुप्पिया ! ॥४२॥

अर्थ—तब अर्जुन ने श्रमण भगवान महावीर के समीप धर्मकथा सुन कर, हृदयगम करके, हर्षित एवं सन्तुष्ट होकर

कहा-भगवन् ! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूँ। यावत् मेरी आपके निकट दीक्षा लेने की अभिलाषा है।

तब भगवान् बोले-देवानुप्रिय ! जैसे तुम्हे सुख उपजे वैसा करो ॥४२॥

मूल—तए णं से अज्जुणए उत्तरपुरत्थिमदिसिभागं अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता जाव अणगारे जाए जाव विहरइ ॥४३॥

अर्थ—तब अर्जुन ने इशानकोण मे जाकर अपने ही हाथ से पंचमुष्ठिक लोच किया। लोच करके यावत् अनगार होकर विचरने लगा ॥४३॥

मूल—तए णं से अज्जुणे अणगारे जं चेव दिवसं मुंडे जाव पव्वइए तं चेव दिवस समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एयारूवं उग्गहं उग्गिण्हइ- कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणस्स विहरित्तए त्ति कट्टु अयमेयारूवं अभिग्गहं ओगेण्हइ, ओगिण्हित्ता जावजीवाए जाव विहरइ ॥४४॥

अर्थ—तत्पश्चात् अर्जुन अनगार जिस दिन मुंडित एवं प्रव्रजित हुए, उसी दिन उन्होंने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार का अभिग्रह ग्रहण किया-मुझे निरन्तर जीवन पर्यन्त षष्ठभक्त अर्थात् बेले-बेले का तप करके, अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरना कल्पता है। उन्होंने इस प्रकार का आजीवन अभिग्रह धारण किया यावत् अपनी आत्मा को तप एवं सयम से भावित करते हुए विचरने लगे ॥४४॥

मूल—तए णं से अज्जुणए अणगारे छट्ठक्खमणपारणयंसि पढमपोरिसीए सज्झायं करेइ, जहा गोयमसामी जाव अडइ ॥४५॥

अर्थ—तब अर्जुन अनगार ने बेले की पारणा के दिन प्रथम प्रहर में स्वाध्याय किया। दूसरे प्रहर में ध्यान किया। तीसरे प्रहर में जिस प्रकार गौतम स्वामी भगवान् की आज्ञा लेकर गोचरी के लिए गये उसी प्रकार अर्जुन अनगार भी राजगृह नगर में भिक्षा के लिए भ्रमण करने लगे ॥४५॥

मूल—तए णं तं अज्जुणयं अणगारं रायगिहे नयरे उच्च जाव अडमाणं बहवे इत्थीओ य पुरिसा य डहरा य महल्ला य जुवाणा य एवं वयासी इमेणं मे पिया मारिए, इमेणं मे माया मारिया, माया० भगिणी० भज्जा० पुत्त० धूया० सुण्हा मारिया, इमेणं मे अण्णयरे सयणसंबंधिपरियणे मारिए त्ति कट्टु अप्पेगइया अक्कोसंति, अप्पेगइया हीलंति निंदंति खिंसंति गरिहंति, तज्जेंति, तालेंति ।४६॥

अर्थ—तब राजगृह नगर में भिक्षा के लिए अटन-करते हुए अर्जुन अनगार को देख कर बहुत-सी महिलाएँ, पुरुष, छोटे, बड़े और युवक जन इस प्रकार कहने लगे—इसने मेरे पिता को मारा था, इसने मेरी माता को मारा था, पत्नी को मारा था, इसने मेरे भाई, बहिन, स्वजन, पुत्र, पुत्री या पुत्रवधू को मारा था, इसने मेरे अमुक स्वजन को, सम्बन्धीजन को या परिजन को मारा था। इस प्रकार कह कर कोई-कोई अर्जुन मुनि पर आक्रोश करने लगे, कोई-कोई अवहेलना करने लगे, कोई-कोई निन्दा करने लगे, कोई खिसियाने (क्रुद्ध होते) थे, कोई गर्हा करने लगे, यहां तक कि कोई-कोई तर्जना और ताड़ना भी करने लगे ॥४६॥

मूल—तए णं से अज्जुणए अणगारे तेहिं बहूहिं इत्थीहि य पुरिसेहि य डहरेहि य महल्लएहि य जुवाणएहि य आओसेज्जमाणे जाव तालेज्जमाणे तेसिं मणसा वि अप्पउस्समाणे सम्मं सहइ सम्मं खमइ, तितिक्खइ, अहियासेइ, सम्मं सहमाणे खममाणे तितिक्खमाणे अहियासेमाणे रायगिहे णयरे उच्चनीयमज्झिमाइं कुलाइं अडमाणे जइ भत्तं लभइ तो पाणं न लभइ, जया पाणं लभइ तो भत्तं न लभइ ॥४७॥

अर्थ—उस समय अर्जुन अनगार ने बहुत-सी स्त्रियों द्वार, पुरुषों द्वारा, छोटों, बड़ों और युवकों द्वारा आक्रोश यावत् ताडना करने पर मन से भी उनके ऊपर द्वेषभाव न धारण करते हुए उस आक्रोश आदि को समभाव से सहन किया, तितिक्षा की, अध्यास किया। यह सब करते हुए वे राजगृह नगर के उच्च, नीच और मध्यम घरों मे परिभ्रमण करते थे। फिर भी उन्हे भोजन मिल जाता तो पानी न मिलता और यदि पानी मिलता तो भोजन न मिलता ! ॥४७॥

मूल—तए णं से अज्जुणए अणगारे अदीणे, अविमणे, अकलुसे, अणाइले, अविसाई, अपरितंतजोगी अडइ, अडित्ता रायगिहाओ णयराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव गुणसिलए चेइए जेणेव समणे भगव महावीरे जहेव गोयमसामी जाव पडिदंसेइ पडिदंसित्ता समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे अमुच्छिए ४ बिलमिव पन्नगभूएणं अप्पाणेणं तमाहारं आहारेइ ॥४८॥

अर्थ—उस समय अर्जुन अनगार न दीनता धारण करते, न मन को उदास करते, न कलुषित करते, न मलिन करते, न विषाद करते और न ऊबते थे। वह आत्मभाव मे स्थिर होकर भिक्षा के लिए अटन करते। अटन करने के पश्चात् वे राजगृह नगर से बाहर निकले और जहाँ गुणशिलक चैत्य और जहाँ भगवान् महावीर स्वामी थे, वहाँ पहुँचे। पहुँच कर गौतम स्वामी की तरह भगवान् को आहार दिखलाया। फिर श्रमण भगवान् महावीर की आज्ञा प्राप्त कर अमूर्छित-अगृद्ध भाव से उस आहार को ग्रहण किया-जैसे साँप बिल में प्रवेश करता है ॥४८॥

मूल—तए णं समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइ रायगिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ ॥४९॥

अर्थ—श्रमण भगवान् महावीर अन्यदा कदाचित् राजगृह नगर से निकले। निकल कर बाहर जनपदों में (विभिन्न प्रदेशो मे) विचरने लगे ॥४९॥

मूल—तए णं से अज्जुणए अणगारे तेणं उरालेणं विउलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं महाणुभागेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुण्णे छम्मासे सामण्णपरियागं पाउणइ, अद्धमासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसेइ, तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ जाव सिद्धे ॥५०॥

अर्थ—तब अर्जुन अनगार ने उस उदार एवं विस्तीर्ण प्रयत्न से तथा ग्रहण किये हुए महान् फलदायक तपश्चरण से अपनी आत्मा को भावित करते हुए पूरे छह मास तक दीक्षा पाली। अर्द्ध मास की संलेखना का सेवन किया। अनशन से तीस भक्तों का छेदन किया और जिस प्रयोजन के लिए नग्नभाव मुंडभाव धारण किया था, उसे पूर्ण कर यावत् सिद्धि प्राप्त की ॥५०॥

तीसरा अध्ययन समाप्त



चौथा अध्ययन

मूल—उक्खेवओ चउत्थस्स अज्झयणस्स। एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे, गुणसिलए चेइए, तत्थ णं सेणिए राया, कासवे णामं गाहावई परिवसइ, जहा मंकाई, सोलस वासं परियाओ, विउले सिद्धे ॥१॥

अर्थ—चौथे अध्ययन का उत्क्षेप कहना चाहिए। सुधर्मा स्वामी बोले–हे जम्बू! उस काल और उस समय में

राजगृह नगर था, गुणशिलक नामक चैत्य था। वहाँ श्रेणिक राजा था और काश्यप नामक गाथापति रहता था। जैसा मकाई गाथापति का कथन किया, वैसा ही सब काश्यप का भी जानना। सोलह वर्ष तक संयम का पालन करके विपुलाचल से सिद्धि प्राप्त की ॥४॥

चौथा अध्ययन समाप्त



पंचम अध्ययन

मूल—एवं खेमए वि गाहावई, णवरं कागंदी नयरी, सोलसवासाइं परियाओ, विपुले सिद्धे ।५॥

अर्थ—इसी प्रकार क्षेम गाथापति का भी अधिकार समझना चाहिए। विशेषता यह है कि–क्षेम गाथापति काकंदी नगरी के निवासी थे। सोलह वर्ष तक सयम का पालन करके विपुल पर्वत से सिद्ध हुए ॥५॥

पाँचवाँ अध्ययन समाप्त



छठा अध्ययन

मूल—एवं धितिधरे वि गाहावई, कागंदीए णयरीए सोलसवासाइं परियाओ जाव विपुले सिद्धे ।६।

अर्थ—इसी प्रकार धृतिधर गाथापति का भी वृत्तान्त जानना चाहिए। वह काकंदी नगरी के निवासी थे। सोलह वर्ष संयम पाल कर विपुल पर्वत से सिद्ध हुए ॥६॥

छठा अध्ययन समाप्त

सातवां अध्ययन

मूल—एवं केलासे वि गाहावई सागेए णयरे, बारस वासाइं परियाओ, विपुले सिद्धे ॥७॥

अर्थ—कैलाश गाथापति का भी वृत्तान्त ऐसा ही है। वे साकेत नगर के निवासी थे। बारह वर्ष तक संयम पाल कर विपुल पर्वत से सिद्ध हुए ॥७॥

सातवां अध्ययन समाप्त

आठवां अध्ययन

मूल—एवं हरिचंदणे वि गाहावई, सागेए णयरे बारसवासाइं परियाओ, विपुले सिद्धे ॥८॥

अर्थ—इसी प्रकार हरिचन्दन गाथापति का भी वृत्तान्त जानना। साकेत नगर के निवासी थे। बारह वर्ष संयम पाल कर विपुल पर्वत से सिद्ध हुए ॥८॥

आठवां अध्ययन समाप्त



नौवां अध्ययन

मूल—एवं बारेत्तए वि गाहावई, णवरं रायगिहे णगरे, बारस वासाइं परियाओ, विउले सिद्धे ।९।

अर्थ—इसी प्रकार बारवत्तक गाथापति का भी वृत्तान्त जानना चाहिए। वह राजगृह नगर के निवासी थे। बारह वर्ष तक संयम पाला। विपुल पर्वत से सिद्धि प्राप्त की ॥९॥

नौवां अध्ययन समाप्त



दसवां अध्ययन

मूल—एवं सुदंसणे वि गाहावई, णवरं वाणियगामे णयरे, दूइपलासे चेइए, पंच वासाइं परियाओ, विउले सिद्धे ॥१०॥

अर्थ—सुदर्शन गाथापति का भी वृत्तान्त ऐसा ही समझना चाहिए। विशेषता यह है कि–वाणिजग्राम नगर था, दूतिपलाश नामक चैत्य था। पांच वर्ष तक संयम पाला। विपुलाचल से सिद्ध हुए ॥१०॥

दसवां अध्ययन समाप्त



ग्यारहवां अध्ययन

मूल—एवं पुण्णभद्दे वि गाहावई, वाणियगामे णयरे, पंच वासाइं परियागं, विउले सिद्धे ॥११॥

अर्थ—पूर्णभद्र गाथापति का वृत्तान्त भी इसी प्रकार समझना चाहिए। वाणिजग्राम नगर था। पांच वर्ष संयम का पालन किया। विपुल पर्वत से सिद्ध हुए ॥११॥

ग्यारहवां अध्ययन समाप्त



बारहवां अध्ययन

मूल—एवं सुमणभद्दे वि गाहावई, सावत्थीए णयरीए बहु वासाइं परियाओ, विपुले सिद्धे ।१२।

अर्थ—इसी प्रकार सुमनभद्र गाथापति का वृत्तान्त भी जानना चाहिए। वह श्रावस्ती नगरी के निवासी थे।

वहुत वर्षों तक संयम पाला। विपुल पर्वत से सिद्ध हुए ॥१२॥

बारहवां अध्ययन समाप्त



तेरहवां अध्ययन

मूल—एवं सुपइट्ठे वि गाहावई, सावत्थीए णयरीए सत्तावीसं वासाइं परियाओ, विउले सिद्धे ।१३।

अर्थ—सुप्रतिष्ठ गाथापति का वृत्तान्त भी ऐसा ही है। श्रावस्ती नगरी के निवासी थे। सत्ताईस वर्ष संयम का पालन किया। विपुल पर्वत से सिद्ध हुए ॥१३॥

तेरहवां अध्ययन समाप्त



चौदहवां अध्ययन

मूल—एवं मेहे वि गाहावई, रायगिहे णयरे बहूइं वासाइं परियाओ, विउले सिद्धे ॥१४॥

अर्थ—मेघ गाथापति का वृत्तान्त भी ऐसा ही जानना चाहिए। राजगृह नगर में रहते थे। बहुत वर्षों तक संयम पाला। विपुल पर्वत से सिद्ध हुए ॥१४॥

चौदहवां अध्ययन समाप्त

पन्द्रहवां अध्ययन

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं पोलासपुरे णयरे सिरिवणे उज्जाणे; तत्थ णं पोलासपुरे णयरे विजए नामं राया होत्था ॥१॥

अर्थ—उस काल और उस समय मे पोलासपुर नामक नगर और श्रीवन नामक उद्यान था। पोलासपुर नगर मे विजय नामक राजा था ॥१॥

मूल—तस्स णं विजयस्स रण्णो सिरिनामं देवी होत्था, वण्णओ। २॥

अर्थ—उस विजय राजा की रानी श्रीदेवी थी। यहाँ रानी का वर्णन समझना चाहिए ॥२॥

मूल—तस्स णं विजयस्स रण्णो पुत्ते सिरीए देवीए अत्तए अइमुत्ते नामं कुमारे होत्था, सुकुमाले ।३।

अर्थ—उस विजय राजा का पुत्र और श्रीदेवी का आत्मज अतिमुक्त नामक कुमार था। वह सुकुमार शरीर का धारक था ॥३॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव सिरिवणे विहरइ ॥४॥

अर्थ—उस काल और उस समय मे श्रमण भगवान् महावीर स्वामी यावत् श्रीवन उद्यान मे तप—संयम से आत्मा [illegible] ॥४॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई जहा पन्नत्तीए जाव पोलासपुरे णयरे उच्चनीच जाव अडइ ॥५॥

अर्थ—उस काल और उस समय मे श्रमण भगवान् महावीर के बडे शिष्य इन्द्रभूति (गौतम) नामक अनगार, जिनके शरीर आदि का वर्णन भगवतीसूत्र मे कहा है, यावत् बेले की पारणा के लिए पोलासपुर में ऊँच, नीच मध्यम कुलों मे अटन कर रहे थे ॥५॥

मूल—इमं च णं अतिमुत्ते कुमारे ण्हाए जाव विभूसिए, बहूहिं दारएहि य दारियाहि य, डिंभएहि य डिंभियाहि य कुमारेहि य कुमारियाहि य सद्धिं संपरिवुडे साओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव इंदट्ठाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तेहिं बहूहिं दारएहि य जाव संपरिवुडे अभिरममाणे अभिरममाणे विहरइ ॥६॥

अर्थ—इधर अतिमुक्त कुमार स्नान करके यावत् विभूषित होकर बहुत-से बच्चों, बच्चियों, बालकों, बालिकाओं, कुमारो और कुमारिकाओं के साथ, परिवृत्त हो कर, अपने घर से बाहर निकला। निकल कर जहाँ खेलने की जगह थी, वहां पहुँचा। पहुँच कर उन बच्चों आदि के साथ खेलने लगा ॥६॥

मूल – तए णं भगवं गोयमे पोलासपुरे नगरे उच्चनीय जाव अडमाणे इंदट्ठाणस्स अदूरसामंतेणं वीइवयइ। तए णं अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं अदूरसामंतेणं वीइवयमाणं पासइ, जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता भगवं गोयमं एवं वयासी के णं भंते तुब्भे ? किं वा अडह ? ॥७॥

अर्थ—उस समय भगवान् गौतम पोलासपुर नगर मे उच्च नीच यावत् घरों मे भिक्षा के लिए घूमते हुए उस इन्द्र-

स्थान—भिक्षाभूमि से न बहुत दूर और न बहुत समीप से अर्थात् कुछ दूर से निकले। तब अतिमुक्त कुमार ने भगवान् गौतम को कुछ दूर से जाते देखा। देख कर वह भगवान् गौतम के पास आया। आकर भगवान् गौतम से बोला-भगवन्! आप कौन हैं? किसलिए घूम रहे हैं? ॥७॥

मूल — तए णं भगवं गोयमे अइमुत्तं कुमारं एवं वयासी—अम्हे णं देवाणुप्पिया! समणा निग्गंथा इरियासमिया जाव बंभयारी, उच्चनीय जाव अडामो। ८॥

अर्थ —तब भगवान् गौतम ने अतिमुक्त कुमार से कहा—देवानुप्रिय! हम निर्ग्रन्थ श्रमण हैं, ईर्यासमिति से युक्त यावत् ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले हैं। भिक्षा के लिए उच्च-नीच एव मध्यम कुलों में भ्रमण कर रहे हैं ॥८॥

मूल – तए णं अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एवं वयासी एह णं भंते! तुब्भे जाणं अहं तुम्मं भिक्खं दवावेमि त्तिकट्टु भगवं गोयमं अंगुलीए गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागए ॥९॥

अर्थ—तब अतिमुक्त कुमार ने भगवान् गौतम से कहा—भगवन्! आओ, जिससे मैं तुम्हे भिक्षा दिलाऊँ, इस प्रकार कह कर भगवान् गौतम की उंगली पकड़ी और उंगली पकड़ कर अपने घर की ओर ले गया ॥९॥

मूल—तए णं सा सिरिदेवी भगवं गोयमं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठ आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागया, भगवं गोयमं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभेइ, जाव पडिविसज्जेइ ॥१०॥

अर्थ—उस समय अतिमुक्त कुमार की माता श्रीदेवी ने भगवान् गौतम स्वामी को आते देखा। देखते ही वह आसन छोड़ कर खड़ी हो गई। जहां भगवान् गौतम थे वहां आई। भगवान् गौतम को तीन बार हाथ जोड़ कर तीन बार

आदक्षिण प्रदक्षिणा करके वन्दन और नमस्कार किया। वन्दन नमस्कार के पश्चात् विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम आहार बहराया यावत् विदा किया ॥१०॥

मूल—तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एवं वयासी—कहिं णं भंते ! तुब्भे परिवसह ॥११॥

अर्थ—उस समय अतिमुक्त कुमार ने भगवान् गौतम से इस प्रकार पूछा—भगवन् ! आप कहाँ रहते हैं ? ॥११॥

मूल—तए णं भगवं गोयमे अइमुत्तं कुमारं एवं वयासी—एव खलु देवाणुप्पिया ! मम धम्मायरिए धम्मोवएसए भगवं महावीरे आइकरे जाव संपाविउकामे इहेव पोलासपुरस्स बहिया सिरिवणे उज्जाणे आहा-पडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तत्थ णं अम्हे परिवसामो ॥१२॥

अर्थ—तब भगवान् गौतम ने अतिमुक्त कुमार से कहा—देवानुप्रिय ! मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक, भगवान् महावीर धर्मतीर्थ की आदि करने वाले यावत् निर्वाण के अभिलाषी, इस पोलासपुर नगर के बाहर श्रीवन नामक उद्यान में यथोचित—साधु के योग्य स्थान ग्रहण करके सयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरते हैं। उसी जगह हम भी रहते है ॥१२॥

मूल—तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एव वयासी—गच्छामि णं भंते ! अहं तुब्भेहिं सद्धिं समणं भगवं महावीरं पायवंदए ?

'अहासुहं देवाणुप्पिया !' ॥१३॥

अर्थ—तब अतिमुक्त कुमार ने भगवान् गौतम से इस प्रकार कहा—भगवन् ! मैं आपके साथ श्रमण भगवान् महावीर के चरणों की वन्दना के लिए चलूं ?

गौतम स्वामी ने उत्तर दिया—देवानुप्रिय ! जैसे तुम्हें सुख उपजे वैसा करो ॥१३॥

मूल—तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवया गोयमेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवा-गच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं वंदइ जाव पज्जुवासइ ॥१४॥

अर्थ—तब अतिमुक्त कुमार भगवान् गौतम के साथ श्रमण भगवान् महावीर के पास पहुँचा। वहाँ पहुँच कर उसने श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा की, वन्दना की यावत् पर्युपासना की ॥१४॥

मूल—तए णं भगवं गोयमे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागए जाव पडिदंसेइ, पडि-दंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावमाणे विहरइ ॥१५।

अर्थ—तब भगवान् गौतम स्वामी जहाँ श्रमण भगवान् महावीर थे, वहाँ आए। जो आहार लाये थे, वह उन्हें दिखलाया, यावत् संयम-तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे ॥१५॥

मूल—तए णं समणे भगवं महावीरे अइमुत्तस्स कुमारस्स तीसे य धम्मकहा ॥१६।

अर्थ—तब श्रमण भगवान् महावीर ने अतिमुक्त कुमार को और परिषद् को धर्मोपदेश दिया ॥१६॥

मूल—तए णं से अइमुत्ते कुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठे, जं नवरं देवाणुप्पिया ! अम्मापियरं आपुच्छामि, तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अन्तिए जावपव्वयामि ॥१७॥

अर्थ—श्रमण भगवान् महावीर से धर्मोपदेश सुनने के अनन्तर अतिमुक्त कुमार हर्षित हुआ, संतुष्ट हुआ और बोला—देवानुप्रिय ! मैं अपने माता-पिता से पूछ लेता हूँ, तत्पश्चात् मैं देवानुप्रिय के निकट प्रव्रज्या ग्रहण करूँगा ॥१७॥

मूल — अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह ॥१८॥

अर्थ—तब भगवान् ने कहा–देवानुप्रिय ! जैसे सुख उपजे वैसा करो। विलम्ब मत करो ॥१८॥

मूल—तए णं से अइमुत्ते कुमारे जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागए जाव पव्वइत्तए ॥१९॥

अर्थ—तत्पश्चात् अतिमुक्त कुमार माता–पिता के पास आए, यावत् बोले–मुझे आज्ञा दीजिए, मै दीक्षा ग्रहण करना चाहता हूँ ॥१९॥

मूल - अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी–बाले सि णं तुमं पुत्ता ! असंबुद्धे सि तुमं पुत्ता ! किं णं तुमं जाणासि धम्म ? ॥२०॥

अर्थ—तब माता–पिता ने अतिमुक्त कुमार से कहा–हे पुत्र ! तू बालक है। हे पुत्र ! तू अबोध है। तू धर्म के विषय में क्या समझता है ? कुछ नही ॥२०॥

मूल—तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापियरं एवं वयासी–एवं खलु अम्मयाओ ! जं चेव जाणामि तं चेव न याणामि, जं चेव न जाणामि तं चेव जाणामि ॥२१॥

अर्थ—तब अतिमुक्त कुमार ने माता–पिता से कहा–अहो माता–पिता ! जिसको मै, जानता हूँ, उसी को नहीं जानता और जिसे नही जानता, उसी को जानता हूँ ॥२१॥

मूल— तए णं अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी–कहं णं तुमं पुत्ता ! जं चेव जाणासि तं चेव न जाणासि जं चेव न जाणासि तं चेव जाणासि ? ॥२२॥

अर्थ—तब माता-पिता ने अतिमुक्त कुमार से पूछा—पुत्र ! किस प्रकार तुम जो जानते हो वह नहीं जानते हो और जो नहीं जानते हो वो जानते हो ? ॥२२॥

मूल—तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापियरं एवं वयासी—जाणामि णं अहं अम्मयाओ ! जहा जायएणं अवस्स मरियव्वं, न जाणामि अहं अम्मयाओ ! काहे वा, कहिं वा, कहं वा केवचिरेण वा ! न जाणामि णं अम्मयाओ ! केहिं कम्मायययोहिं जीवा नेरइयतिरिक्खजोणियमणुस्सदेवेसु उववज्जंति । जाणामि णं अम्मयाओ ! जहा सएहिं कम्मायययोहिं जीवा नेरइय जाव उववज्जंति । एवं खलु अहं अम्मयाओ ! जं चेव जाणामि तं चेव न जाणामि, जं चेव न जाणामि तं चेव जाणामि । तं इच्छामि णं अम्मयाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए जाव पव्वइत्तए ॥२३॥

अर्थ—तब अतिमुक्त कुमार ने उत्तर दिया—अहो माता-पिताओ ! मैं जानता हूँ कि जो जन्मा है वह अवश्य मरेगा परन्तु मैं यह नहीं जानता कि किस निमित्त से, किस स्थान पर, किस प्रकार और कितने समय मे मरेगा ! अहो माता-पिता ! मैं यह नहीं जानता हूँ कि जीव किन कर्म से नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव गति में उत्पन्न होते हैं, परन्तु यह जानता हूँ कि जीव अपने ही बांधे कर्म-बन्धनों से नरकादि गति मे उत्पन्न होते है अहो माता-पिता ! इस प्रकार मैं जिसे जानता हूँ उसे नहीं जानता हूँ और जिसे नहीं जानता हूँ उसे जानता हूँ । इस कारण अहो माता-पिता ! मैं आपकी आज्ञा प्राप्त कर प्रव्रजित होना चाहता हूँ ॥२३॥

मूल—तए णं अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो जाहे नो संचाएति बहूहिं आघवणाहिं पण्णवणाहिं, तं इच्छामो ताया ! एगदिवसमवि रज्जसिरिं पासित्तए ॥२४॥

अर्थ—जब अतिमुक्त कुमार के माता-पिता जब उसे बहुत कह कर एव समझा कर तथा संसार के सुख और

सयमपालन मे होने वाले कष्ट बतला कर संसार के भोगों में लुभाने के लिए समर्थ न हुए, तब कहने लगे–हे पुत्र ! हम एक दिन के लिए भी तेरी राज्यश्री देखना चाहते है अर्थात् तुझे राजा के रूप मे देखना चाहते है ।।२४।।

मूल--तए णं अतिमुत्ते कुमारे अम्मापिउवयणमणुवत्तमाणे तुसिणीए संचिट्ठइ । २५।।

अर्थ—तब अतिमुक्त कुमार माता–पिता के वचन को मान देकर मौन रह गया ।।२५।।

मूल --अभिसेओ जहा महाबलस्स, णिक्खमणं जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ अहिज्जित्ता बहुइं वासाइं सामन्नपरियागं गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं जाव विउले सिद्धे ।२६।

अर्थ—जिस प्रकार भंगवती सूत्र मे महाबल कुमार के राज्याभिषेक और दीक्षा का वर्णन है, उसी प्रकार यहाँ जानना चाहिए, यावत् दीक्षा धारण कर अनगार हुए । सामायिक से प्रारंभ कर ग्यारह अंग पढे । बहुत वर्षों तक संयम पाला । गुणरत्नसंवत्सर तप किया, यावत् विपुल पर्वत से सिद्धि प्राप्त की ।।२६।।

[भगवतीसूत्र शतक ५ उद्देशक ४ मे कहा है–उस काल और उस समय मे श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के भद्र एवं विनीत प्रकृति वाले अतिमुक्त अनगार एकदा महावृष्टि होने के बाद जगल गये । वहाँ अतिमुक्त मुनि ने पानी के बहते हुए प्रवाह को पाल बाँध कर रोका । फिर उस पानी मे पात्री रख कर कहने लगे–'मेरी यह नाव तिरती है ! साथ के अन्य साधुओ ने यह खेल देखा और श्रमण भगवान् श्री महावीर स्वामी के पास आकर पूछा–आपका शिष्य अतिमुक्त मुनि कितने भव करके मोक्ष जाएँगा ? भगवान् बोले–वह चरमशरीरी है–इसी भव से मोक्ष जाएगा । अतएव हे आर्यो ! तुम अतिमुक्त मुनि का निन्दाहीलना मत करो । अग्लानभाव से उसकी भक्ति करो–अन्नपानादि से वैयावृत्य करो । स्थविर भगवतो ने वैसा ही किया ।]

पन्द्रहवां अध्ययन पूर्ण

गुणरत्नसंवत्सर तप

(कोष्ठक और विधि)

तप दिन																	पारणा	सर्व दिन
३२	१६	१६															२	३४
३०	१५	१५															२	३२
२८	१४	१४															२	३०
२६	१३	१३															२	२८
२४	१२	१२															२	२६
३३	११	११	११														३	३६
३०	१०	१०	१०														३	३३
२७	९	९	९														३	३०
२४	८	८	८														३	२७
२१	७	७	७														३	२४
२४	६	६	६	६													४	२८
२५	५	५	५	५	५												५	३०
२४	४	४	४	४	४	४											६	३०
२४	३	३	३	३	३	३	३	३									८	३२
२०	२	२	२	२	२	३	२	२	२	२							१०	३०
१६	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१६	३२

विधि—प्रथम मास मे एकान्तर उपवास, दूसरे में बेले-बेले पारणा, तीसरे मे तेले-तेले पारणा, यावत् सोलहवे महीने में सोलह-सोलह उपवास के पारणा करे। दिन मे उत्कटासन से सूर्य की आतापना ले, रात्रि मे वस्त्र रहित होकर वीरासन से ध्यान करे। इसके सब दिन ४०८, पारणा दिन ७४ और सब दिन ४८२ होते है।

सोलहवां अध्ययन

मूल—उक्खेवओ सोलसमस्स अज्झयणस्स। एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणारसीए नयरीए काममहावणे चेइए। तत्थ णं वाणारसीए अलक्खे णामं राया होत्था ॥१॥

अर्थ—सोलहवे अध्ययन का उत्क्षेप कहना चाहिए। श्रीसुधर्मा स्वामी बोले—हे जम्बू ! उस काल और उस समय मे वाणारसी नगरी मे काम-महावन नामक चैत्य था। वाणारसी नगरी मे अलक्ष नामक राजा राज्य करता था ॥१॥

मूल—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव समोसरिए, विहरति परिसा णिग्गया ॥२॥

अर्थ—उस काल और उस समय मे श्रमण भगवान् महावीर का पदार्पण हुआ और काममहावन चैत्य में ठहर कर सयम-तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। भगवान् के दर्शन और वन्दन के लिए परिषद् निकली ॥२॥

मूल—तए णं अलक्खे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे हट्ठतुट्ठ जहा कूणिए जाव पज्जुवासइ। ३॥

अर्थ—तब अलक्ष राजा को यह वृत्तान्त विदित हुआ तो वह हर्षित और सन्तुष्ट हुआ। उववाईसूत्र में वर्णित कोणिक राजा के समान सम्पूर्ण साज सज कर वह दर्शनार्थ आया यावत् उपासना करने लगा ॥३॥

मूल—धम्मकहा ॥४॥

अर्थ—भगवान् ने धर्मकथा सुनाई ॥४॥

मूल—तए णं से अलक्खे राया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए जहा उदायणे तहा णिक्खंते; णवरं जेट्ठपुत्तं रज्जे अभिसिंचइ ॥५॥

अर्थ—तत्पश्चात् अलक्ष राजा ने भगवतीसूत्र मे वर्णित उदायन राजा के समान श्रमण भगवान् महावीर के निकट प्रव्रज्या अंगीकार की। विशेषता इतनी है कि उदायन ने अपने भागिनेय (भाणेज) को राज्यभार सौंपा था, जब कि अलक्ष ने अपने ज्येष्ठ पुत्र को राज्यभार दिया ॥५॥

मूल—एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, बहूवासाइं परियाओ, विउले सिद्धे ॥६॥

अर्थ—दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् अलक्ष मुनि ने ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। बहुत वर्षों तक संयम का पालन किया, यावत् विपुलाचल पर्वत पे सिद्धि प्राप्त की ॥६॥

सोलहवां अध्ययन समाप्त

षष्ठ वर्ग समाप्त

सप्तम वर्ग

मूल—जइ णं भंते ! ० सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवश्रो । जाव तेरस श्रज्झयणा पराणत्ता; तंजहा—

नंदा तह नंदवई, नंदोत्तर नंदसेणिया चेव ।
मरुया सुमरुया महमरुया, मरुदेवा य अट्ठमा ॥१॥

भद्दा य सुभद्दा य, सुजाया सुमणाइया ।
भूयदिन्ना य बोद्धव्वा, सेणियभज्जाण नामाइं ॥२॥

अर्थ—श्री जम्बू स्वामी ने भगवान् सुधर्मा से निवेदन किया–भगवन् ! मैंने छठे वर्ग का अर्थ सुना । श्रमण भगवान् महावीर यावत् निर्वाणप्राप्त ने सातवे वर्ग का क्या अर्थ फरमाया है ? तब सुधर्मा स्वामी ने उत्तर दिया–श्रमण भगवान् महावीर ने सातवे वर्ग के तेरह अध्ययन कहे हैं । वे इस प्रकार है–(१) नन्दा (२) नन्दवती (३) नन्दोत्तरा (४) नंदसेना (५) मरुता (६ सुमरुता (७) महामरुता (८) मरुदेवी (९) भद्रा (१०) सुभद्रा (११) सुजाता (१२) सुमता और (१३) भूतदत्ता । यह तेरहों श्रेणिक राजा की रानियों के नाम हैं ॥१॥

मूल - जइ णं भंते ! तेरस अज्झयणा पराणत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पराणत्ते ? ॥२॥

अर्थ—भगवन् ! यदि सातवें वर्ग के तेरह अध्ययन कहे हैं तो प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ कहा है ? ॥२॥

मूल—एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया, वण्णओ ॥३॥

अर्थ—हे जम्बू ! उस काल और उस समय में राजगृह नामक नगर था । गुणशील चैत्य था । श्रेणिक राजा था । उसका वर्णन जान लेना चाहिए ॥३॥

मूल—तस्स णं सेणियस्स रण्णो नंदा नामं देवी होत्था, वण्णओ ॥४॥

अर्थ—उस श्रेणिक राजा की नन्दा नामक रानी थी वह सुकुमाल यावत् सुरूपा थी ॥४॥

मूल—सामी समोसढे, परिसा णिग्गया ॥५॥

अर्थ—श्रमण भगवान् महावीर स्वामी पधारे । परिषद् धर्मकथा सुनने के लिए निकली ॥५॥

मूल—तए णं सा णंदा देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठा, कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता जाव जहा पउमावई, जाव एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता वीसं वासाइं परियाय पाउणित्ता जाव सिद्धा ।

एवं तेरस वि देवीओ णंदागमेणं णेयव्वाओ । निक्खेवओ ॥६॥

अर्थ—वह नन्दा देवी भगवान् के आगमन का वृतान्त सुन कर हर्षित हुई । कौटुम्बिक पुरुषों को बुलवा कर धार्मिक रथ मंगवा कर आयी । पद्मावती रानी की तरह भगवान् के निकट गई । धर्मकथा सुनी । श्रेणिक राजा की अनुमति लेकर दीक्षा ग्रहण की । ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । बीस वर्ष संयम पाला, यावत् सिद्धि प्राप्त की ॥ यह सप्तम वर्ग का प्रथम अध्ययन पूर्ण हुआ ।

जिस प्रकार नन्दा देवी का कथन किया, उसी प्रकार तेरहों रानियों के तेरह अध्ययन कहना चाहिए । यहां सातवें वर्ग का निक्षेप—उपसंहार समझना चाहिए ॥६॥

सप्तम वर्ग समाप्त

अष्टम वर्ग

मूल—जइ णं भंते ! अट्ठमस्स वग्गस्स उक्खेवओ, जाव णवरं दस, अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा—

काली सुकाली महाकाली कण्हा सुकण्हा महकण्हा ।
वीरकण्हा य बोद्धव्वा, रामकण्हा तहेव य ।।
पिउसेणकण्हा नवमी, दसमी महासेनकण्हा य ।।१।।

अर्थ—अहो भगवन् ! यदि श्रमण भगवान् महावीर ने सातवे वर्ग का यह अर्थ कहा है तो आठवे वर्ग का क्या अर्थ कहा है ? इस प्रकार का उत्क्षेप कहना चाहिए ।

सुधर्मा स्वामी ने कहा–हे जम्बू श्रमण भगवान् महावीर ने आठवे वर्ग के दस अध्ययन कहे है, यथा–(१) काली (२) सुकाली (३) महाकाली (४) कृष्णा (५) सुकृष्णा (६) महाकृष्णा (७) वीरकृष्णा (८) रामकृष्णा (९) प्रियसेनकृष्णा और (१०) महासेनकृष्णा । दस अध्ययनों में इन दस रानियों का वर्णन है ।।१।।

मूल—जइ णं भंते ! अट्ठमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ? ।।२।।

अर्थ—जम्बू स्वामी ने पुनः प्रश्न किया—भगवन् ! यदि आठवें वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं तो प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ कहा है ? ॥२॥

मूल—एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था, पुण्णभद्दे चेइए, कोणिए राया ।३।

अर्थ—श्रीसुधर्मा स्वामी ने उत्तर दिया—हे जम्बू उस काल और उस समय में चम्पा नाम की नगरी थी । उसके उद्यान में पूर्णभद्र नामक चैत्य था । कोणिक नामक राजा राज्य करता था ॥३॥

मूल—तत्थ णं चंपाए णयरीए सेणियस्स रण्णो भज्जा, कोणियस्स रण्णो चुल्लमाउया काली नामं देवी होत्था, वण्णओ । जहा णंदा जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारस्स अंगाइं अहिज्जइ, बहूहिं चउत्थ जाव अप्पाणं भावेमाणा विहरइ ।४।

अर्थ—चम्पा नगरी में श्रेणिक राजा की भार्या और कोणिक राजा की छोटी माता काली नामक देवी थी । उसका वर्णन यहाँ समझ लेना चाहिए । जैसा नन्दा रानी का अधिकार कहा, वैसा ही इसका भी जानना चाहिए । यावत् दीक्षा धारण कर, सामायिक से लेकर ग्यारह अंगों का अध्ययन किया, बहुत-से चतुर्थभक्त षष्ठभक्त आदि तपश्चरण से तथा संयम से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ॥४॥

मूल—तए णं सा काली अज्जा अण्णया कयाइं जेणेव अज्ज चंदणा अज्जा तेणेव उवागया, एवं वयासी—इच्छामि णं अज्जाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी रयणावलिं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ।

'अहा सुहं' ॥५॥

अर्थ—काली आर्या ने किसी समय आर्य चन्दना आर्यिका के समीप जाकर कहा—'अहो आर्याजी ! आपकी आज्ञा हो तो मैं रत्नावली तप अंगीकार करके विचरना चाहती हूं।

तब चन्दनबाला आर्यिका ने कहा—जैसे सुख उपजे वैसा करो ॥५॥

मूल—तए णं सा काली अज्जा अज्ज चंदणाए अब्भणुण्णाया समाणी रयणावलिं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। तंजहा—चउत्थं करेइ, चउत्थं करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारेत्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारेत्ता अट्ठमं करेइ करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारेत्ता अट्ठ छट्ठाइं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, दुवालसमं करेइ, सव्वकाम०, चौदसमं करेइ, सव्व०, सोलसमं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठारसमं करेइ, सव्वकाम०, वीसइमं करेइ, सव्वकाम०, बावीसइमं करेइ, सव्वकाम०, चउवीसइमं करेइ, सव्वकाम०, छव्वीसइमं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठावीसइमं करेइ, सव्वकामगुण०, तीसइमं करेइ, सव्वकाम०, बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारेत्ता चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकाम० पारेइ, पारित्ता चउत्तीसं छट्ठाइं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ ॥

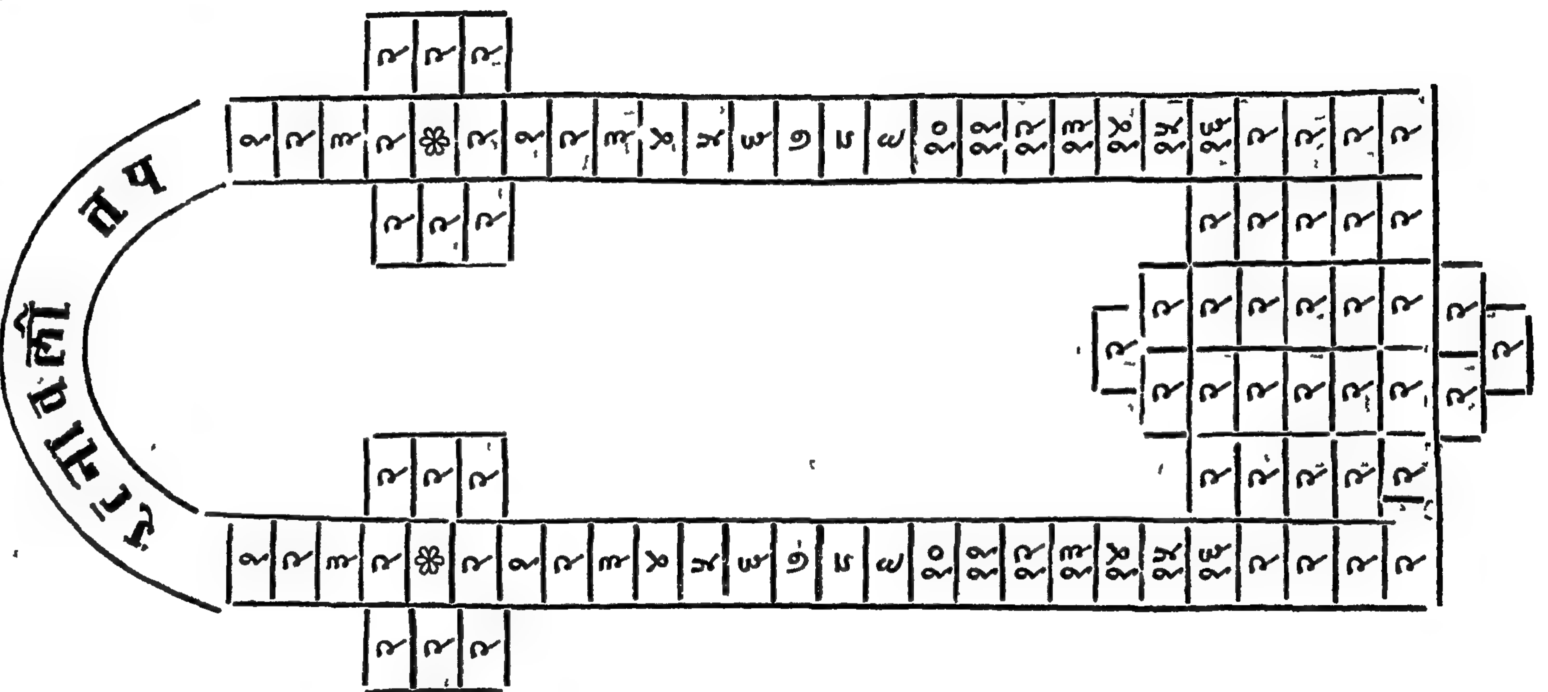
चउत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकाम० पारेइ, तीसइम करेइ, सव्वकामगु०, अट्ठाइसमं करेइ, सव्वकाम० पारेइ, छव्वीसइं करेइ, सव्वकाम०, चोवीसइमं करेइ, सव्वकाम०, बावीसइमं करेइ, सव्व०, वीसइमं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्व—

कामगुण०, सोलसमं करेइ, सव्वकाम०, चउद्दसमं करेइ, सव्वकाम० बारसमं करेइ, सव्वकाम०, दसमं करेइ सव्वकामगुणियं पारेइ, अट्ठमं करेइ, सव्वकाम०, छट्ठ करेइ, करित्ता सव्वकाम० पारेइ, चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, अट्ठ छट्ठाइं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, अट्ठमं करेइ, सव्वकाम० पारेइ, छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणं पारेइ ॥६॥

अर्थ—तब काली नामक आर्यिका ने आर्या चन्दनबालाजी आर्यिका की आज्ञा प्राप्त करके रत्नावली तप अंगीकार किया। वह इस प्रकार—चतुर्थभक्त (एक उपवास) किया, चतुर्थ भक्त करके सर्वकामगुणित (सब प्रकार के रस भोगने की जिसमें छूट हो ऐसा) पारणा किया, पारणा करके षष्ठ भक्त (बेला) किया, बेला करके सर्वकामगुणित पारणा किया, आठ बेले किये, फिर पारणा किया, चतुर्थभक्त किया, पारणा किया, षष्ठभक्त करके पारणा किया, अष्टमभक्त करके पारणा किया, दशमभक्त (चोला) करके पारणा किया, द्वादशमभक्त (पचोला) करके पारणा किया, चौदहभक्त (छह उपवास) करके पारणा किया, षोडशभक्त (सात उ.) करके पारणा किया, अठारहभक्त (आठ उपवास) करके पारणा किया, बीसभक्त (नौ उपवास) करके पारणा किया, बावीसभक्त (दश उपवास) करके पारणा किया, चौवीसभक्त (ग्यारह उपवास) करके पारणा किया, छव्वीसभक्त (बारह उपवास) करके पारणा किया, अट्ठाईसभक्त (तेरह उ.) करके पारणा किया, तीसभक्त (चौदह उपवास) करके, पारणा किया, बत्तीसभक्त (पन्द्रह उ.) करके पारणा किया, चौतीसभक्त (सोलह उपवास) करके पारणा किया, फिर चौतीस षष्ठभक्त (बेले) किये, तत्पश्चात् सोलह उपवास करके पारणा किया, फिर पन्द्रह उपवास करके पारणा किया, इसी प्रकार चौदह उपवास करके, तेरह उपवास करके, बारह उपवास करके, ग्यारह उपवास करके, दस उपवास करके, नौ उपवास करके, आठ उपवास करके, सात उपवास करके, छह उपवास करके, पांच उपवास करके, चार उपवास करके, तीन उपवास करके, दो उपवास करके और एक उपवास करके पारणा किया। तत्पश्चात् आठ बेले किये, फिर अष्टमभक्त, षष्ठभक्त और चतुर्थभक्त

करके पारणा किया। (इसमे सब पारणा सर्वकामगुणित होते है) ॥६॥

रत्नावली तप का कोष्टक इस प्रकार है—



(१) रत्नावली तप की एक परिपाटी के तपोदिन ३८४, पारणक दिन ८८, सब महीने १५ और दिन २२ होते हैं। चार परिपाटियों में ५ वर्ष, २ मास, २८ दिन लगते हैं।

(२) सुकाली आर्यिका ने कनकावली तप किया। दोनों में अन्तर यह है-रत्नावली तप में दोनों फूलों की जगह ३४ बेले हैं। कनकावली में उनकी जगह तेला किया जाता है। कनकावली तप के तपोदिन ४३४, पारणदिन ८८ हैं। सब १७ महीने और १२ दिन होते हैं। चारों परिपाटियों में ४ वर्ष, ६ महीने, १८ दिन लगते हैं।

मूल—एवं खलु एसा रयणावलीए तवोकम्मस्स पढमा परिवाडी. एगेणं संवच्छरेणं, तिहिं मासेहिं. बावीसाए अहोरत्तेहिं अहासुत्तं जाव आराहिया भवति ॥७।

अर्थ—रत्नावली तप की यह प्रथम परिपाटी है। इसके करने में एक वर्ष, तीन मास और बाईस अहोरात्र (दिन रात) लगते हैं। इस प्रकार सूत्र के अनुसार प्रथम परिपाटी की आराधना होती है ॥७॥

मूल—तयाणंतरं च णं दोच्चाए परिवाडीए चउत्थं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ, जहा पढमाए परिवाडीए तहा बीयाए वि, णवरं सव्वत्थ पारणए विगइवज्जं पारेति, जाव आराहिया भवइ ॥८॥

अर्थ—प्रथम परिपाटी पूर्ण करने के पश्चात् काली नामक आर्या ने दूसरी परिपाटी आरम्भ की। उस दूसरी परिपाटी में चतुर्थभक्त किया, चतुर्थभक्त करके विकृतिहीन (दूध, दही, घी, तेल आदि विगय रहित) पारणा किया, फिर षष्ठभक्त किया और इसी प्रकार अर्थात् विगयरहित पारणा किया। इस तरह पहली परिपाटी में जिस क्रम से तपस्या की थी, उसी क्रम से दूसरी परिपाटी में भी तपस्या की। विशेषता यही कि इस परिपाटी में सब पारणा विगय रहित किया गया। इस प्रकार रत्नावली तप की दूसरी परिपाटी की सूत्रानुसार आराधना की जाती है ॥८॥

मूल—तयाणंतरं च णं तच्चाए परिवाडीए चउत्थं करेइ, अलेवाडं पारेइ जाव आराहिया भवइ ।९।

अर्थ—दूसरी परिपाटी पूर्ण हो जाने पर तीसरी परिपाटी आरंभ की । उसमें सर्वप्रथम चतुर्थभक्त किया, फिर षष्ठभक्त किया, इत्यादि सब तपस्या प्रथम परिपाटी के क्रमानुसार की । विशेषता यह कि दूसरी परिपाटी में विगय का त्याग किया था और इस परिपाटी में निर्लेप (जिसका लेप न लगे) आहार से पारणा किया ।।९।।

मूल—एवं चउत्था परिवाडी, नवरं सव्वपारणए आयंबिलं पारेइ, सेसं तं चेव । गाहा—

पढमंमि सव्वकामं, पारणयं विइयए विगयवज्जं ।
ततियंमि अलेवाडं, आयंबिलओ चउत्थंमि ।।१०।।

अर्थ—इसी प्रकार चौथी परिपाटी में तपस्या की, परन्तु इसमें प्रत्येक पारणा में आयंबिल किया । शेष सब क्रम प्रथम परिपाटी के समान समझना चाहिए । गाथा का अर्थ-प्रथम परिपाटी में सर्वकामगुणित पारणा, दूसरी मे विकृति-वर्जित, तीसरी मे निर्लेप और चौथी में आयंबिल से पारणा किया जाता है ।।१०।।

मूल—तए णं सा काली अज्जा तं रयणावलिं तवोकम्मं पंचहिं संवच्छरेहिं दोहिं य मासेहिं अट्ठा-वीसाए य दिवसेहिं अहासुत्तं जाव आराहेत्ता जेणेव अज्ज चंदणा अज्जा तेणेव उवागच्छइ, अज्ज चंदणं च वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता बहूहिं चउत्थ जाव अप्पाणं भावेमाणा विहरति ।।११।।

अर्थ—तब काली आर्यिका रत्नावली तप की पाँच वर्ष, दो मास और अठाईस दिनों में शास्त्रानुसार आराधना करके, जहाँ आर्य चन्दना आर्यिका थी वहाँ गई । चन्दना आर्यिका को वन्दन-नमस्कार किया । वन्दना-नमस्कार करके वहुत-से उपवास बेला आदि करके यावत् आत्मा को भावित करती विचरने लगी ।।११।।

मूल—तए णं सा काली अज्जा तेणं उरालेणं जाव धम्मणिसंतए जाया यावि होत्था, से जहा इंगालसगडेइ वा जाव हुयासणेइ वा भासरासिपलिच्छिण्णा तवेणं तेएणं तवतेयसिरीए अईव उवसोभेमाणी २ चिट्ठइ ॥१२॥

अर्थ—काली आर्या की उस उदार-प्रधान तपस्या के कारण यावत् नस-नस दिखाई देने लगी-वह अत्यन्त कृश और दुर्बल हो गई। जैसे कोयलों से भरी गाडी जब चलती है तो कड़-कड़ शब्द करती है, उसी प्रकार उनके शरीर की हड्डियाँ कड़कड़ाने लगी। मगर वह आर्या तपस्या के तेज से प्रज्वलित अग्नि के समान देदीप्यमान थी। जैसे राख से ढँकी हुई अग्नि प्रदीप्त रहती है, उसी प्रकार वह आर्या भी देदीप्यमान थी ॥१२॥

मूल—तए णं तीसे कालीए अज्जाए अण्णया कयाइ पुव्वरत्त वरत्तकालसमयंसि अयमज्झत्थिए जहा खंदयस्स, तहा जाव अत्थि मे उट्ठाणे जाव पुरिसक्कारपरक्कमे जाव मे सेयं कल्लं जाव जलंते अज्जचंदणं अज्जं आपुच्छित्ता, अज्जचंदणाए अज्जाए अब्भणुण्णाए समाणीए संलेहणा झूसणा आराहणा भत्तपाणपडियाइक्खियाए कालं अणवकंखमाणं विहरित्तए त्तिकट्टु एवं संपेहित्ता कल्लं जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अज्जचंदणं अज्जं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—इच्छामि णं अज्जाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी संलेहणा जाव विहरित्तए।

'अहासुहं' ॥१३॥

अर्थ—तत्पश्चात् काली आर्या को किसी समय अर्द्ध रात्रि के पश्चात् धर्म जागरणा करते हुए भगवतीसूत्र मे वर्णित स्कन्दक मुनि के समान विचार उत्पन्न हुआ। यावत् जहां तक मेरे शरीर मे शक्ति है, उत्थान, कर्म, बल, वीर्य,

पुरुषकार और पराक्रम है, तब तक, प्रातःकाल होते ही आर्यचन्दना आर्यिका से पूछ कर, उनकी आज्ञा प्राप्त करके अन्तिम आराधना रूप सलेखना ग्रहण करके, आहार-पानी का परित्याग करके, मृत्यु की कामना न करते हुए विचरना मेरे लिए कल्याणकारी है। इस प्रकार विचार करके, प्रभात होने पर, वह आर्य चन्दना आर्या के पास गईं। वहाँ जाकर उन्हे वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके कहा-अहो आर्यिके ! आपकी अनुमति प्राप्त करके मै सलेखनाव्रत गहण करके विचरना चाहती हू।

तब चन्दनबाला आर्यिका ने कहा-जैसे तुम्हे सुख उपजे वैसा करो ॥१३॥

मूल—तएणं सा काली अज्जा चंदणाए अब्भणुण्णाया समाणी संलेहणा झूसिया जाव विहरइ।१४।

अर्थ—तत्पश्चात् चन्दना आर्यिका की अनुमति प्राप्त होने पर काली आर्या ने संलेखना का सेवन किया और यावत् काल की आकाक्षा न करती हुई विचरने लगी ॥१४॥

मूल—सा काली अज्जा अज्जचंदणाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं अट्ठ संवच्छराइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ जाव चरिमुस्सासनीसासेहिं सिद्धा ॥१५॥

अर्थ—काली आर्या ने आर्य चन्दना के निकट सामायिक से लेकर ग्यारह अंगों का अध्ययन किया, पूरे आठ वर्षो तक साध्वीपर्याय का पालन किया, एक मास की सलेखना की, अनशन से साठ भक्तों का छेदन किया और अन्त मे जिस प्रयोजन के लिए मुण्डित हुई थी, उसे सिद्ध किया, यावत् चरम उच्छ्वास-निश्वास में सिद्ध हुई ॥१५॥

प्रथम अध्ययन समाप्त

द्वितीय अध्ययन



मूल—उक्खेवओ वीय अज्झयणस्स । एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपाणामं णयरी होत्था । पुण्णभद्दे चेइए, कोणिए राया । तत्थ णं सेणियस्स रण्णो भज्जा कोणियस्स रण्णो चुल्ल-माउया सुकालीनामं देवी होत्था । जहा काली तहा सुकाली वि णिक्खंता जाव बहूहिं चउत्थ जाव भावेमाणा विहरइ ॥१ ।

अर्थ—दूसरे अध्ययन का उत्क्षेप सुधर्मा स्वामी ने कहा हे जम्बू ! उस काल और उस समय मे चम्पा नामक नगरी थी । पूर्णभद्र नामक चैत्य था । कोणिक नाम का राजा था । वहां श्रेणिक राजा की पत्नी और कोणिक राजा की छोटी माता सुकाली नाम की रानी थी । जिस प्रकार काली रानी ने दीक्षा ग्रहण की, उसी प्रकार सुकाली ने भी । यावत् बहुत से उपवास बेला आदि तपश्चरण एवं संयम से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ॥१॥

मूल—तए णं सुकाली अज्जा अन्नया कयाइ जेणेव अज्जचंदणा अज्जा जाव इच्छामि णं अज्जो ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाया समाणी कणगावलीतवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए । एवं जहा रयणावली तहा कणगावली, नवरं तिसु ठाणेसु अट्ठमाइं करेइ जहा रयणावलीए छट्ठाइं ॥२॥

अर्थ—तदनन्तर एक बार किसी समय सुकाली आर्या जहां चन्दनबाला आर्या थी वहां गई और वन्दना-नमस्कार करके कहने लगी- आपकी आज्ञा हो तो मैं कनकावली तप अंगीकार करना चाहती हूँ । जिस प्रकार रत्नावली तप कहा

है, उसी प्रकार कनकावली तप भी कहना चाहिए। विशेषता यह है कि रत्नावली तप मे तीन जगह जहाँ षष्ठभक्त कहे हैं, वहाँ कनकावली मे अष्टमभक्त (तेला) कहना चाहिए; अर्थात् प्रथम स्थान में आठ बेलों की जगह आठ तेले, तप के मध्य मे चोतीस बेलो की जगह चौतीस तेला और तीसरे स्थान मे आठ बेलों को जगह आठ तेला कहना चाहिए ॥२॥

मूल—एक्काए परीवाडोए संवच्छरो, पंच मासा, बारस अहोरत्ता ।३॥

अर्थ—इस तप को एक परिपाटी मे एक वर्ष पाँच मास और बारह अहोरात्र लगे ॥३॥

मूल—चउण्हं पंच वरिसा, नव मासा, अट्ठारस दिवसा, सेसं तहेव ।

नव वासाइं परियाओ जाव सिद्धा ॥४॥

अर्थ—कनकावली तप की चारो परिपाटियों मे पाँच वर्ष, नौ मास, अठारह दिन लगे। शेष सब कथन पूर्ववत् समझना ।

सुकाली आर्या नौ वर्ष तक सयम पाल कर यावत् सिद्ध हुई ॥४॥

द्वितीय अध्ययन समाप्त

तृतीय अध्ययन



मूल—एवं महाकाली वि, णवरं खुड्डागसीहनिक्कीलियं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तंजहा—

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, परित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगु०, छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, दसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, दसमं करेइ करित्ता सव्वकाम०, चउदसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, सोलसमं करेइ, सव्वकाम०, चउदसमं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठारसमं करेइ, सव्वकाम०, सोलसमं करेइ, सव्वकाम०, वीसइमं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठारसमं करेइ, सव्वकाम०, वीसइमं करेइ, सव्वकाम०,सोलसमं करेइ,सव्वकामगु०, अट्ठारसमं करेइ, सव्वकामगुणियं०, चउदसमं करेइ, सव्वकाम०, सोलसमं करेइ, सव्वकाम०, बारसमं करेइ, सव्वकाम०, चोदसमं करेइ, सव्वकाम०, दसमं करेइ, सव्वकामगु०, दुवालसमं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठमं करेइ, सव्वकाम०, दसमं करेइ, सव्वकाम०, छट्ठं करेइ, सव्वकामगु०, पारेइ, अट्ठमं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं करेइ, सव्वकाम०, पारेइ, छट्ठं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं करेइ, सव्व० पारेइ ॥१॥

[illegible]—इसी प्रकार महाकाली रानी का भी अधिकार जानना। विशेष यह है कि उनने लघुसिंहनिष्क्रीडित तप स्वीकार किया, सर्व-प्रथम चतुर्थभक्त किया, सब प्रकार के रसोपभोग कर पारणा किया, फिर षष्ठभक्त किया, सर्वकामगुणित पारणा किया, फिर चतुर्थभक्त किया, पारणा किया, अष्टमभक्त किया, पारणा किया, षष्ठभक्त करके पारणा किया, दशमभक्त किया, पारणा किया, अष्टमभक्त करके पारणा किया, द्वादशभक्त करके पारणा किया, दशमभक्त करके पारणा किया, चतुर्दशभक्त करके पारणा किया, द्वादशभक्त करके पारणा किया, षोडशभक्त करके पारणा किया, चतुर्दशभक्त करके पारणा किया, अष्टादशभक्त करके पारणा किया, षोडशभक्त करके पारणा किया, बीसभक्त करके

पारणा किया, अष्टादशभक्त करके पारणा किया, बीसभक्त करके पारणा किया, षोडशभक्त करके पारणा किया, अष्टादशभक्त करके पारणा किया, चौदहभक्त करके पारणा किया, षोडशभक्त करके पारणा किया, द्वादशभक्त करके पारणा किया, चौदहभक्त करके पारणा किया, दशमभक्त करके पारणा किया, द्वादशभक्त करके पारणा किया, अष्टमभक्त करके पारणा किया, दशमभक्त करके पारणा किया, षष्ठभक्त करके पारणा किया, अष्टमभक्त करके पारणा किया, चतुर्थभक्त करके पारणा किया, षष्ठभक्त करके पारणा किया और अन्त में चतुर्दशभक्त करके पारणा। इस प्रकार तपस्या करने पर इस व्रत की पहली परिपाटी पूर्ण होती है ॥१॥

मूल—तहेव चत्तारि परिवाडीओ। एक्काए परिवाडीए छम्मासा सत्त य दिवसा; चउण्हं दो वरिसा अट्ठावीस दिवसा। जाव सिद्धा ।२॥

अर्थ—इसी प्रकार चारों परिपाटी समझना चाहिए। दूसरी परिपाटी मे विगयवर्जित पारणा, तीसरी में निर्लेप पारणा और चौथी परिपाटी मे आयबिल से पारणा किया; ऐसा कहना चाहिए। इस तपस्या की एक परिपाटी में छह मास और सात दिन लगे। चारों परिपाटियों मे दो वष और अट्ठाईस दिन लगे। अन्त मे महाकाली आर्या ने संलेखना धारण कर यावत् सिद्धि प्राप्त की ॥२॥

लघुसिंहनिष्क्रीडित तप कोष्टक

लघुसिंहनिष्क्रीडित तप

१	लघुसिंह क्रीडा तप	१
२		२
१	तपोदिन १५४, पारणक दिन ३३, सब मास ६, दिन ७। चारों परिपाटियों के २ वर्ष, २८ दिन।	१
३		३
२		२
४		४
३		३
५		५
४		४
६		६
५		५
७		७
६		६
८		८
७		७
९	८	९

तृतीय अध्ययन समाप्त

चतुर्थ अध्ययन



मूल—एवं कण्हा वि, णवरं महालयं सीहनिक्कीलियं तवोकम्मं; जहेव खुड्डागं, णवरं चोतीसइमं जाव नेयव्वं, तहेव ऊसारेयव्वं ॥१॥

अर्थ—इसी प्रकार कृष्णा रानी का वृत्तान्त भी जानना चाहिए। यावत् दीक्षा धारण करके कृष्णारानी ने महासिह निष्क्रीडित तप किया। जैसा लघुसिह निष्क्रीडितव्रत कहा है, वैसा ही महासिह निष्क्रीडित व्रत भी जानना चाहिए। इसमे विशेषता यही है कि लघुसिह निष्क्रीडित तप मे वीसभक्त (९ उपवास) तक तपस्या करके वापिस फिरते हैं, किन्तु इसमे चौतीसभक्त (१६ उपवास) करके पीछे फिरते है। शेष पूर्वोक्त प्रकार ही घटाना चाहिए ॥१॥

मूल—एक्काए परिवाडीए वरिसं, छ मासा अट्ठारस य दिवसा, चउण्हं छ वरिसा, दो मासा, वारस य अहोरत्ता, सेसं जहा कालीए जाव सिद्धा ॥२॥

अर्थ—इस तपस्या की एक परिपाटी मे एक वर्ष, छह महीने और अठारह दिन लगते हैं। चारों परिपाटियों में छह वर्ष, दो मास तथा बारह दिनरात लगते हैं। शेष वृत्तान्त काली रानी के समान जानना, यावत् सिद्ध हुई ॥२॥

चतुर्थ अध्ययन समाप्त

पांचवां अध्ययन

मूल — एवं सुकण्हा वि, णवरं सत्तसत्तमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। पढमे सत्तए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ एक्केक्कं पाणयस्स, दोच्चे सत्तए दो दो भोयणस्स दो दो पाणगस्स पडिगाहेइ, तच्चे सत्तए तिण्णि भोयणस्स तिण्णि पाणयस्स, चउत्थे चउ, पंचमे पंच, छट्ठे छ, सत्तमे सत्तए सत्तदत्तीओ भोयणस्स पडिग्गाहेति; सत्त पाणस्स ॥१॥

अर्थ — इसी प्रकार सुकृष्णा रानी का अधिकार जानना चाहिए। विशेषता यह है कि-उसने सप्त-सप्तमिका नामक भिक्षुप्रतिमा अंगीकार की। यथा-प्रथम सात दिन तक सदैव एक दत्ति आहार की और एक दत्ति पानी की ग्रहण की। दूसरे सप्तक में-सात दिन-दो दत्ति आहार की और दो दत्ति पानी की ग्रहण की। तीसरे सप्तक में तीन दत्ति आहार की और तीन दत्ति पानी की ग्रहण की। इसी प्रकार चौथे सप्तक में चार-चार दत्तियाँ, पांचवें में पांच-पांच दत्तियाँ, छठे में छः-छः दत्तियाँ और सातवें में सात दत्ति आहार और सात दत्ति पानी की ग्रहण की ॥१॥

मूल — एवं खलु सत्तसत्तमियं भिक्खुपडिमं एगूणपण्णाए राइंदिएहिं एगेण य छण्णउएणं भिक्खासएणं अहासुत्तं जाव आराहित्ता जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागया ॥२॥

अर्थ — इस प्रकार सप्तसप्तमिका नामक भिक्षुप्रतिमा में उनचास अहोरात्र लगे। सब दत्तियाँ मिलकर एक सौ छियानवे हुईं। इस प्रतिमा का सूत्र के अनुसार यावत् आराधन करके जहाँ आर्य चन्दना नामक आर्यिका थी, वहाँ गईं ॥२॥

मूल—अज्ज चंदणं अज्जं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-इच्छामि णं अज्जाओ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए।

'अहासुहं' ॥३॥

अर्थ—चन्दना आर्या के समीप पहुँच कर उनको वदना नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार करके निवेदन किया—अहो आर्यिकाजी आपकी आज्ञा हो तो अष्टाष्टमिका नामक भिक्षुप्रतिमा अगीकार करके विचरूँ।

चदन वाला आर्या ने कहा—जिस प्रकार सुख हो वैसा करो ॥३॥

मूल—तए णं सा सुकण्हा अज्जा अज्जचंदणाए अब्भणुण्णाया समाणी अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। पढमे अट्ठए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं, एक्केक्कं पाणगस्स दत्तिं जाव अट्ठमे अट्ठए अट्ठट्ठ भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ, अट्ठ पाणगस्स। एवं खलु एयं अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं चउसट्ठीए राइं-दिएहिं दोहि य अट्ठासीएहि भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता नवनवमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ॥४॥

अर्थ—तत्पाश्चात् सुकृष्णा आर्या ने आर्य चन्दना की आज्ञा प्राप्त कर अष्टाष्टमिका नामक भिक्षुप्रतिमा अगीकार की। इसमें पहले आठ दिनों तक एक दात आहार की और एक दात पानी की, दूसरे आठ दिनों तक दो दत्ति आहार की और दो दत्ति पानी की, यावत् आठवे आठ दिनों तक आठ दत्ति आहार की और आठ दत्ति पानी की ग्रहण की। इसकी आराधना में ६४ दिन लगे। सब दत्तियाँ दो सौ अठासी हुई। इस प्रतिमा का सूत्र के अनुसार आराधन करके नवनवमिका नामक भिक्षुप्रतिमा अगीकार करके विचरने लगी ॥४॥

मूल—पढमे नवए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिग्गाहेइ, एक्केक्कं पाणयस्स, जाव नवमे नवए नव दत्तिं भोयणस्स पडिग्गाहेइ, नव पाणस्स, एवं खलु नवनवमियं भिक्खुपडिमं एक्कासीए राइंदिएहिं, चउहिं पंचोत्तरेहिं भिक्खासएहिं अहासुत्तं० ।५।

अर्थ—नवनवमिका, नामक भिक्षुप्रतिमा में प्रथम नौ दिनों में एक-एक दत्ति भोजन की और एक-एक दत्ति पानी की ग्रहण की, यावत् नौवें नवक में नौ-नौ दत्तियाँ भोजन की और नौ-नौ पानी की ग्रहण की। इस प्रकार नव-नवमिका नामक भिक्षुप्रतिमा इक्यासी रात्रि-दिनों में तथा चार सौ पचहत्तर दत्तियों में पूर्ण हुई ॥५॥

मूल—दसदसमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, पढमे दसके एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिग्गाहेइ, एक्केक्कं पाणयस्स, जाव दसमे दसए दस दस भोयणस्स दत्तिं पडिग्गाहेइ, दस दस पाणयस्स। एवं खलु एयं दसदसमियं भिक्खुपडिमं एक्केणं राइंदियसएणं अद्धछट्ठेहिं भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहेइ ।६॥

अर्थ—तत्पश्चात् दसदसमिका नामक भिक्षुप्रतिमा अंगीकार की। इसके प्रथम दस दिनों में एक-एक दत्ति भोजन की और एक-दत्ति पानी की, यावत् दसवें दस दिनों में दस दत्तियाँ भोजन की और दस दत्तियाँ पानी की ग्रहण कीं। इस प्रतिमा की आराधना में सौ दिन लगे। सब दत्तियाँ पचास कम छह सौ (५५०) हुईं। इस प्रकार सूत्र के अनुसार यावत् इस प्रतिमा का आराधन किया ॥६॥

मूल—आराहित्ता बहूहिं चउत्थ जाव मासद्धमास विविहतवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणा विहरइ ।७॥

अर्थ—दशदशमिका भिक्षुप्रतिमा का सेवन करने के बाद सुकृष्णा साध्वी बहुत-से उपवास, बेला, मासखमण, अर्धमासखमण आदि अनेक प्रकार के तप करके अपनी आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ॥७॥

मूल—तए णं सा सुकण्हा अज्जा तेणं उरालेणं जाव सिद्धा ॥८॥ निक्खेवओ ॥

अर्थ—तदनन्तर सुकृष्णा आर्या उस उदार तपस्या से दुर्बल हुई यावत् अन्त में सलेखना करके सिद्ध हुई ॥८॥ पांचवे अध्ययन का निक्षेप।

पांचवां अध्ययन समाप्त

षष्ठ अध्ययन



मूल—एवं महाकण्हा वि, णवरं खुड्डागं सव्वओभद्दं पडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ; तंजहा-चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारेत्ता छट्ठं करेइ, करेत्ता सव्वकामगु० पारेइ, पारेत्ता अट्ठमं करेइ, करेत्ता सव्वकाम० पारेइ, दसमं करेइ, सव्व० पारेइ, दुवालसमं करेइ, सव्वकाम०, पारेत्ता अट्ठमं करेइ, करेत्ता सव्वकाम०, पारित्ता दसमं करेइ, करेत्ता सव्वकाम०, पारेत्ता दुवालसमं करेइ, करेत्ता सव्वकाम०, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम० पारित्ता छट्ठं करेइ सव्वकाम०, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम० पारेइ, पारेत्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, पारेत्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्व०, परित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्व०, परित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, पारेत्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, परित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, परित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, पारेत्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, परित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकाम० पारेइ ॥१।

अर्थ—इसी प्रकार महाकृष्णा रानी भी दीक्षा धारण कर विचरने लगी। विशेषता यह है कि महाकृष्णा ने छोटी सर्वतोभद्रप्रतिमा की आराधना की। उसकी विधि इस प्रकार है—सर्वप्रथम चतुर्थभक्त किया, सर्वकामगुणित पारणा किया, फिर षष्ठभक्त करके पारणा किया, अष्टमभक्त करके पारणा किया, दशमभक्त करके पारणा किया, द्वादशभक्त करके पारणा किया, फिर अष्टमभक्त करके पारणा किया, दशमभक्त करके पारणा किया, द्वादशभक्त करके पारणा किया, चतुर्थभक्त करके पारणा किया, षष्ठभक्त करके पारणा किया, द्वादशभक्त करके पारणा किया, चतुर्थभक्त करके पारणा किया, फिर षष्ठभक्त, अष्टमभक्त, दशमभक्त, षष्ठभक्त, अष्टमभक्त, दशमभक्त, द्वादशभक्त, चतुर्थभक्त, दशमभक्त द्वादशभक्त, चतुर्थभक्त, षष्ठभक्त, और अष्टमभक्त किया। इन सब के बीच में सर्वकामगुणित पारणा किया ॥१॥

भद्रप्रतिमा

१	२	३	४	५
३	४	५	१	२
५	१	२	३	४
२	३	४	५	१
४	५	१	२	३

तपोदिन ७५, पारणा दिन २५

मूल—एवं खलु एयं खुड्डागसव्वओभद्दस्स तवोकम्मस्स पढमं परिवाडिं तिहिं मासेहिं, दसहिं दिवसेहिं, अहासुत्तं जाव आराहेत्ता दोच्चाए परिवाडीए चउत्थं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ, । जहा रयणावलीए तहा एत्थ वि चत्तारि परिवाडीओ, पारणा तहेव । चउण्हं कालो संवच्छरो, मासो दस य दिवसा, सेसं तहेव जाव सिद्धा निक्खेवओ ॥२॥

अर्थ—यह लघु सर्वतोभद्र तप की पहली परिपाटी है । इसे तीन मास एवं दस दिन में शास्त्रानुसार यावत् आराधन करके दूसरी परिपाटी आरंभ की । उसमें चतुर्थभक्त आदि तपस्या प्रथम परिपाटी के अनुसार ही की, परन्तु पारणा

विगयवर्जित किया। तीसरी परिपाटी में निर्लेप आहार से और चौथी परिपाटी में आयंबिल से पारणा किया। इस प्रकार जैसे रत्नावली तप की चार परिपाटियों में पारणा की विधि कही थी, वैसे ही यहां भी समझना चाहिए। इस तपस्या की चारों परिपाटियों में एक वर्ष, एक मास और दस दिन लगते हैं। शेष वृत्तान्त पूर्ववत् है, यावत् सुकृष्णा ने अन्त में संलेखना करके सिद्धि प्राप्त की। छठे अध्ययन का निक्षेप ॥२॥

छठा अध्ययन पूर्ण

सातवां अध्ययन

मूल—एवं वीरकण्हा वि, णवरं महालयं सव्वओभद्दं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। तंजहा—चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वगुणियं पारेइ, पारेत्ता छट्ठं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, दसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०, दुवालसमं करेइ, सव्वकाम०, चोदसमं करेइ, सव्वकाम०, सोलसमं करेइ, सव्वकामगुण०, एक्का लया ॥१॥

अर्थ—वीरकृष्णा रानी का भी वृत्तान्त इसी प्रकारका जानना चाहिए, यावत् दीक्षा धारण करके विविध प्रकार का तप करने लगी। इसमें विशेषता यह है कि-महासर्वतोभद्रप्रतिमा रूप तप अंगीकार किया। वह इस प्रकार-सर्वप्रथम चतुर्थभक्त किया, सर्व प्रकार के रस का उपभोग करके पारणा किया, इसी प्रकार षष्ठभक्त करके पारणा किया, अष्टम-

भक्त करके पारणा किया, दशमभक्त करके पारणा किया, द्वादशभक्त करके पारणा किया, चौदहभक्त करके पारणा किया, सोलहभक्त करके पारणा किया। यह पहली लता है ॥१॥

मूल—दसमं करेइ, सव्वकामगुण०, दुवालसमं करेइ, सव्वकामगुण० चोद्दसमं करेइ, सव्वकाम०, सोलसमं करेइ, सव्व०, चउत्थं करेइ, सव्वकाम०,छट्ठं करेइ, सव्वकाम० अट्ठमं करेइ, सव्व०, बीया लया ।२।

अर्थ—दशमभक्त करके पारणा किया, द्वादशमभक्त करके पारणा किया, चौदहभक्त करके पारणा किया, सोलहभक्त करके पारणा किया, चतुर्थभक्त करके पारणा किया, पष्ठभक्त करके पारणा किया, अष्टमभक्त करके पारणा किया। यह दूसरी लता है ॥२॥

मूल—सोलसमं करेइ, सव्वकाम गुणं०, चउत्थं करेइ, सव्वकाम०, छट्ठं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठमं करेइ, सव्मकामगुण०, दसमं करेइ, सव्वकाम०, दुवालसमं करेइ, सव्वकाम०, चउद्दसमं करेइ, सव्वकाम० तइया लया ॥३॥

अर्थ—षोडशभक्त करके पारणा किया. चतुर्थभक्त करके पारणा किया, पष्ठभक्त करके पारणा किया, अष्टमभक्त करके पारणा किया, दशमभक्त करके पारणा किया, द्वादशमभक्त करके पारणा किया, चौदहभक्त करके पारणा किया,। यह तीसरी लता ॥३॥

मूल—अट्ठमं करेइ, सव्वकाम०, दसम करेइ, सव्वकाम०, दुवालसमं करेइ, सव्वकाम०, चोद्दसमं

करेइ, सव्वकाम०, सोलसमं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं करेइ, सव्वकाम०, छट्ठं करेइ, सव्वकामगुणं पारेइ, चउत्थी लया ॥४॥

अर्थ—अष्टमभक्त कर पारणा किया, दशमभक्त कर पारणा किया, द्वादशभक्त कर पारणा किया, चौदहभक्त कर पारणा किया, सोलहभक्त कर पारणा किया, चतुर्थभक्त कर पारणा किया, षष्ठभक्त करके पारणा किया, यह चौथी लता ॥४॥

मूल—चउद्दसमं करेइ, सव्वकाम०, सोलसमं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं करेइ, सव्वकाम०, छट्ठं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठमं करेइ, सव्वकामगु०, दसमं करेइ, सव्वकाम०, दुवालसमं करेइ, सव्वकाम०, पंचमी लया ।५॥

अर्थ—चतुर्दशभक्त करके सर्वकामगुणित पारणा किया, षोडशभक्त करके पारणा किया, चतुर्थभक्त करके पारणा किया, षष्ठभक्त करके पारणा किया, अष्टमभक्त करके पारणा किया, दशमभक्त करके पारणा किया, द्वादशभक्त करके पारणा किया, यह पांचवी लता ॥५॥

मूल—छट्ठं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठमं करेइ, सव्वकाम०, दसमं करेइ, सव्वकाम०, दुवालसमं करेइ, सव्वकाम०, चोद्दसमं क०, सव्वकाम०, सोलसमं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं क०, सव्वकाम०, छट्ठी लया ।६।

अर्थ—षष्ठभक्त, अष्टमभक्त, दशमभक्त द्वादशभक्त, चतुर्दशभक्त, षोडशभक्त और चतुर्थभक्त किया इन सब के

बीच में सर्वकाणगुणित पारणा किया, यह छठी लता है ॥६॥

मूल—दुवालसमं करेइ सव्वकाम०, चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम०. सोलसमं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं करेइ, सव्वकाम०, छट्ठं करेइ, २ सव्वकाम०, अट्ठमं करेइ, सव्वकाम०, दसमं करेइ, सव्वकाम०, सत्तमी लया ॥७॥

अर्थ—द्वादशभक्त, चतुर्दशभक्त, षोडशभक्त, चतुर्थभक्त, षष्ठभक्त, अष्टमभक्त और दशमभक्त किया, इन सब उपवासों से बीच सर्वकामगुणित पारणा किया, यह सातवी लता है ॥७॥

मूल—एक्केक्काए कालो अट्ठमासा पंच य दिवसा, चउण्हं दो वासा, अट्ठ मासा, वीसं दिवसा। सेसं तहेव जाव सिद्धा ॥८॥

अर्थ—इस तपस्या को एक-एक परिपाटी मे आठ-आठ महीना, पाँच-पाँच दिन लगते हैं। चारों परिपाटियों में दो वर्ष, आठ महीना और बीस दिन लगते है। शेष सब पूर्ववत् ही जानना चाहिए ॥८॥

सातवां अध्ययन समाप्त



महासर्वतोभद्रप्रतिमा तप

महा सर्वतोभद्रप्रतिमा

१	२	३	४	५	६	७
४	५	६	७	१	२	३
७	१	२	३	४	५	६
३	४	५	६	७	१	२
६	७	१	२	३	४	५
२	३	४	५	६	७	१
५	६	७	१	२	३	४

तपोदिन १९६

पारणा दिन ४९

आठवां अध्ययन

मूल—रामकण्हा वि, णवरं भद्दोत्तरपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तंजहा—दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम० गुणियं पारेइ, पारेत्ता चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम० पारेइ, सोलसमं करेइ, करेत्ता सव्वकाम० पारेइ, पारेत्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम० पारेइ, पारेत्ता वीसइमं करेइ, करेत्ता सव्वकाम गुणियं पारेइ, पढमा लया ॥१॥

अर्थ—रामकृष्णा रानी का अधिकार भी इसी प्रकार जानना चाहिए। विशेषता केवल यह है कि वह भद्रोत्तर प्रतिमा नामक तपश्चर्या अंगीकार करके विचरने लगी। वह इस प्रकार है–द्वादशभक्त (पांच उपवास) करके सर्वकामगुणित (सब रसों के उपभोग की जिसमे छूट हो ऐसा) पारणा किया फिर चतुर्दशभक्त, सोलह भक्त अष्टादशभक्त और वीसभक्त किया। सब के बीच मे सर्वकामगुणित पारणा किया। यह पहली लता हुई ॥१॥

मूल—सोलसमं करेइ, सव्वकाम० अट्ठारसमं करेइ, सव्वकाम०, वीसइमं करेइ, सव्वकाम०, दुवालसमं करेइ, सव्वकाम०, चोद्दसमं करेइ, सव्वकाम० पारेइ। बीया लया ।२॥

अर्थ—षोडशभक्त (सात उपवास), अष्टादशभक्त (आठ उपवास) विंशतिभक्त (९ उपवास) द्वादशभक्त और चतुर्दशभक्त (छह उपवास) किये। इन सब के मध्य मे सर्वकामगुणित पारणा किया। यह दूसरी लता हुई ॥२॥

मूल—वीसइमं करेइ, सव्वकाम०, दुवालसमं करेइ, सव्वकाम०, चोद्दसमं करेइ, सव्वकाम०, सोलसमं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठारसमं करेइ, सव्वकाम० तइया लया ॥३॥

सर्वतोभद्र प्र०

५	६	७	८	९
७	८	९	५	६
९	५	६	७	८
६	७	८	९	५
८	९	५	६	७

तपोदिन ३९२
पारणादिन ४९
सब ४४२ दिन

नवम अध्ययन

मूल—एवं पिउसेणकण्हा वि, णवरं मुत्तावलीतवोकम्मं उवसंपज्जित्ताण विहरइ, तंजहा—चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करेत्ता सव्वकाम०, चउत्थं करेइ०, सव्वकाम०, अट्ठमं क०, सव्वकाम०, चउत्थं क०, सव्वकाम० दसमं क०, सव्वकाम०, चउत्थं क०, सव्व०, दुवालसमं क०, सव्वकामं०, चउत्थं करेइ, सव्वकाम०, चोद्दसमं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं करेइ, सव्वकामं०, सोलसमं करेइ, सव्व-

कामगु०, चउत्थं करेइ, सव्वकाम०, अट्ठारसमं०, सव्वकाम०, चउत्थं करेइ, सव्वकाम०, वीसइमं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं०, सव्वकाम०, बावीसइमं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं क०सव्व०, चउवीसइमं क०, सव्व०चउत्थं करेइ सव्व०, छव्वीसइमं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं क०, सव्वकाम०, अट्ठावीसइमं करेइ, सव्वकाम०, चउत्थं करेइ०, सव्व०, तीसइमं करेइ, सव्व० बत्तीसइमं क०, सव्वकाम०, चउत्थं करेइ, सव्व० चोत्तीसइमं क०, सव्व० चउत्थं क०, सव्व० चोत्तीसइमं करेइ, सव्व० चउत्थं क०, सव्व० बत्तीसइमं क०, सव्वकाम०, चउत्थं क०, सव्वकाम०, एवं तहेव ओसारेइ जाव चउत्थं करेइ, करेत्ता सव्वकामगुणियं पारेइ ॥१॥

अर्थ—सुकृष्णा रानी का भी वृत्तान्त इसी प्रकार का है। विशेषता यह है कि दीक्षा अंगीकार करने के पश्चात् उसने मुक्तावली नामक तपश्चर्या अंगीकार की। वह इस प्रकार है—चतुर्थभक्त करके सर्वकामगुणित पारणा किया, फिर षष्ठभक्त करके पारणा किया, चतुर्थभक्त करके पारणा किया, इसी प्रकार अष्टमभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, दशमभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, द्वादशभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, चतुर्दशभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, षोडशभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, अठारहभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, वीसभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, बाईसभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, चोवीसभक्त, पारणा, छव्वीसभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, अट्ठाईसभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, तीसभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, बत्तीसभक्त, पारणा, चतुर्थभक्त, पारणा, चोतीसभक्त और पारणा किया, अर्थात् बीच-बीच में एक-एक उपवास करते हुए सोलह उपवास तक चढ़ना और फिर चोतीसभक्त अर्थात् सोलह उपवास करके पूर्वोक्त क्रम से उतरना, यावत् एक उपवास करके पारणा करना। सब जगह पारणा सर्वकामगुणित ही समझना। यह मुक्तावली तप की प्रथम परिपाटी है ॥१॥

मूल-एक्काए परिवाडीए कालो एक्कारस मासा पनरस य दिवसा, चउण्हं कालो तिण्णि वासा दस

य मासा । सेसं तहेव जाव सिद्धा ॥२॥

अर्थ—इस व्रत की भी चार परिपाटियाँ हैं । प्रथम में पारणा में सर्व रसों का उपभोग किया जाता है, दूसरी में विगय का त्याग होता है, तीसरी में निर्लेप आहार से पारणा किया जाता है और चौथी परिपाटी में आयंबिल से पारणा किया जाता है । एक-परिपाटी में ग्यारह मास और पन्द्रह दिन लगते हैं । चारों में तीन वर्ष और दस मास लगते हैं । शेष वृत्तान्त पूर्ववत् समझना यावत् सिद्ध हुई ॥२॥

मुक्तावली तप

१६	१	१५	१	१४	१	१३	१	१२	१	११	१	१०	१	९	१	८	१	७	१	६	१	५	१	४	१	३	१	२	१
१६	१	१५	१	१४	१	१३	१	१२	१	११	१	१०	१	९	१	८	१	७	१	६	१	५	१	४	१	३	१	२	१

मुक्तावली तप

इसको एक परिपाटी के दपोदिन ३००, पारणादिन ६०, सब एक वर्ष
चार परिपाटियो मे चार वर्ष लगते हैं ।

दशम अध्ययन

मूल—एवं महासेणकण्हा वि, णवरं–आयंबिल वड्ढमाणं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तंजहा–आयंबिलयं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, बे आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, तिण्णि आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करेत्ता चत्तारि आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करेत्ता पंच आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ करेत्ता छ आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ करेत्ता सत्त आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, एकोत्तरियाए वड्ढीए आयंबिलाइं वड्ढंति, चउत्थंतरियाइं जाव आयंबिलसय करेइ, करेत्ता चउत्थं करेइ ॥१॥

अर्थ—महासेनकृष्णा का वृत्तान्त भी ऐसा ही है। विशेषता केवल यही है कि–महासेनकृष्णा रानी ने दीक्षा धारण करने के पश्चात् आयबिल वर्द्धमान तपश्चर्या की आराधना की। उसकी विधि इस प्रकार है–एक आयंबिल करके उपवास किया, दो आयबिल करके एक उपवास किया, तीन आयविल करके एक उपवास किया, चार आयबिल करके एक उपवास किया, पाँच आयबिल करके एक उपवास किया, छह आयबिल करके एक उपवास किया, सात आयबिल करके एक उपवास किया, इस प्रकार एक एक आयबिल की वृद्धि करती और बीच-बीच मे एक-एक उपवास करती हुई सौ आयबिल तक पहुँची। सौ आयबिल करके एक उपवास किया ॥१॥

मूल—तए ण सा महासेणकण्हा अज्जा आयंबिलवड्ढमाण तवोकम्मं चउदसवासेहिं तिहि य मासेहिं वीसइ अहोरत्तेहिं अहासुत्तं जाव सम्मं काएणं फासेइ जाव आराहेइ। आराहित्ता जेणेव अज्जचंदणा

अज्जा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अज्जचंदणं अज्जं वंदइ- नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता बहूहिं चउत्थेहिं जाव अप्पाणं भावेमाणी विहरइ ॥२॥

अर्थ—उन महासेनकृष्णा आर्या ने आयंबिल वर्द्धमान तप चौदह वर्षों, तीन महीनों और बीस दिनों में, सूत्र के अनुसार सम्यक् प्रकार से आराधन किया। आराधन करने के बाद जहाँ चन्दनबाला आर्यिका थी, वहाँ गई। जाकर वन्दन-नमस्कार करके बहुत-से उपवास बेला तेला आदि तप करती हुई आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ॥२॥

मूल—तए णं सा महासेणकण्हा अज्जा तेणं उरालेणं जाव उवसोभेमाणी चिट्ठइ ।३॥

अर्थ—तत्पश्चात् महासेनकृष्णा आर्या उस उदार-प्रधान तप के कारण यावत् अतीव शोभती हुई विचरने लगी ।३।

मूल—तए णं तीसे महासेणकण्हाए अण्णया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि चिंता जहा खंधगस्स जाव अज्जचंदणं अज्जं आपुच्छइ, आपुच्छित्ता जाव संलेहणा जाव कालं अणवकंखमाणी विहरइ ॥४॥

अर्थ—तत्पश्चात् महासेनकृष्णा आर्या को किसी समय आधी रात्रि व्यतीत हो जाने के पश्चात् स्कन्दक मुनि के समान विचार उत्पन्न हुआ। यावत् उन्होंने आर्य चन्दना से पूछ कर यावत् संलेखना अंगीकार करके यावत् काल की वांछा न करती हुई विचरने लगी ॥४॥

मूल—तए णं सा महासेणकण्हा अज्जा, अज्जचंदणाए अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं पढिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं सत्तरस वासाइं परियायं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं

झूसित्ता सट्ठिभत्ताइं अणसणाए छेदित्ता जसट्ठाए कीरइ जाव तमट्ठं आराहेइ, चरमेहिं ऊसासनीसासेहिं सिद्धा बुद्धा ॥५॥

अर्थ—अन्त में, महासेनकृष्णा ने आर्यचन्दना आर्यिका से सामायिक से लेकर ग्यारह अंगों का अध्यनन करके, पूरे सत्तरह वर्ष तक सयम का पालन करके, एक मास की संलेखना का सेवन करके, साठ भक्त अनशन से छेद कर, जिस प्रयोजन के लिए प्रव्रज्या अगीकार की थी, उसे पूर्ण किया और अन्तिम श्वासोच्छ्वास के बाद सिद्ध-बुद्ध हुई यावत् सर्व दु:खों का अन्त किया ॥५॥

मूल—अट्ठ य वासा आदी, एकोत्तरियाए जाव सत्तरस।
एसो खलु परियाओ, सेणिय भज्जाण णायव्वो ॥१॥

अर्थ—पहली काली नामक आर्या ने आठ वर्ष तक संयम का पालन किया, दूसरी सुकाली आर्या ने नौ वर्ष, तीसरी ने दस वर्ष, इस प्रकार एक-एक वर्ष बढाते-बढाते दशवी ने सत्तरह वर्ष संयम का पालन किया। यह श्रेणिक राजा की रानियों के संयम का काल जानना चाहिए ॥१॥

दशवां अध्ययन समाप्त



उपसंहार

मूल—एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अयमट्ठे पण्णत्ते ।

अन्तगडदसाणं अंगस्स एगो सुयक्खंधो, अट्ठ वग्गा, अट्ठसु चेव दिवसेसु उद्दिसिज्जंति । तत्थ पढम-बिइयवग्गा दस-दस उद्देसगा, तइयवग्गे तेरस उद्देसगा, चउत्थ-पंचमवग्गा दस-दस उद्देसगा, छट्ठवग्गे सोलस उद्देसगा, सत्तमवग्गे तेरस उद्देसगा, अट्ठमवग्गे दस उद्देसगा ।

इति अंतगडदसासुत्तं समत्तं

अर्थ—श्रीसुधर्मा स्वामी बोले-हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर, धर्मतीर्थ की आदि करने वाले यावत् मुक्तिप्राप्त ने आठवें अंग अन्तकृद्दशा का यह अर्थ कहा है ।

अन्तकृद्दशा अंग का एक श्रुतस्कध है, आठ वर्ग हैं, आठ दिनों में उनका उद्देश होता है ।

प्रथम और द्वितीय वर्ग में दस-दस उद्देशक हैं, तीसरे वर्ग में तेरह, चौथे-पांचवें वर्ग में दस-दस, छठे वर्ग में सोलह, सातवें में तेरह और आठवें वर्ग में दस उद्देशक हैं ।

अन्तकृद्दशासूत्र समाप्त



